अज्ञात की ओर 4

अज्ञात की ओर

चौथा प्रवचन

सूरत 29 जून 1967 संध्या

नीति का पाखंड

मैं अत्यंत आनंदित हूं कि आपसे संध्या अपने हृदय की थोड़ी सी बातें कर सकूंगा। अभी कहा गया कि यह समय अंधकार पूर्ण है और यह युग पतन का भौतिकवाद का और मेटेरियलिज्म का है। सबसे पहले मैं आपको मैं निवेदन कर दूं, यह बात अत्यंत गलत है। यह बात झूठी है। इस बात से यह भ्रम पैदा होता है कि पहले के लोग प्रकाशपूर्ण थे और आज के लोग अंधकारपूर्ण हैं। इससे यह भ्रम पैदा होता है कि पहले कि लोग अंधकार में नहीं थे और हम अंधकार में हैं। इस भ्रम के पैदा हो जाने के कुछ कारण हैं लेकिन यह बात सच नहीं है। हम अनैतिक हैं हम मारल हैं और पहले के लोग नैतिक थे यह बात भी ठीक नहीं है।

अगर पहले के लोग नैतिक थे तो महावीर ने किसको समझाया कि हिंसा मत करो, चोरी मत करो, असत्य मत बोलो। बुद्ध ने किसको उपदेश दिए। राम और कृष्ण किन लोगों को समझा रहे थे अच्छा होने के लिए? अगर लोग अच्छे थे तो ये उपदेश व्यर्थ थे, झूठे थे। इनकी कोई जरूरत न थी। ये दुनिया में, पुरानी सदियों में इतने-इतने बड़े शिक्षक हुए ये क्यों पैदा हुए?

जहां अंधेरा होता है वहां दीयों की जरूरत पड़ती है। जहां भूलें होती हैं,वहां शिक्षक पैदा होते हैं। जहां गल्तियां होती हैं वहां सुधारक का जन्म होता है। अगर पिछली सदियों में इतने बड़े सुधारक दुनिया में पैदा हुए यह किस बात का सबूत है? यह इस बात का सबूत है, उस दिन के लोग भी हमारे जैसे लोग थे जैसे हम हैं वैसे वे लोग थे। वे भी चोरी करते थे और वे भी बेईमान थे और वे भी हिंसा करते थे और युद्ध करते थे। अगर वे बेईमान नहीं थे तो ईमानदारी की शिक्षाएं किसके लिए थीं? अगर वे चोर नहीं थे तो चोरी न करने की बातें किसको समझाई जा रही थीं? वे हम जैसे ही लोग थे आदमी में कोई फर्क नहीं पड़ा है।

तो मैं आपसे कहना चाहूंगा, ये सदी अंधकार में है इससे यह मतलब न लें कि पहले के लोग प्रकाश में थे। आदमी आज तक अंधकार में ही रहा है। यह भ्रम इसलिए पैदा होता है कि पहले के लोग अच्छे थे। इसके भ्रम के पैदा होने के पीछे कोई कारण है वह यह है, हम सारे लोग अभी जमीन पर हैं। हजार साल बाद हमारी याद करने वाला कौन होगा? कोई भी नहीं। लेकिन गांधी याद रह जाएगें, हम सारे लोग के नाम भूल जाएगें, हम सारे लोगो के

कृत्य, हमारी नीति-अनीति सब भूल जाएगें। एक गांधी याद रह जाएगा हमारे बीच से। और हजार साल बाद लोग सोचेंगे कि गांधी इतना अच्छा आदमी था तो उस जमाने के सारे लोग अच्छे रहे होंगे!

आपको पता है बुद्ध के समय में कौन सा आदमी जमीन पर था? कौन सा आदमी सड़कों पर चल रहा था? कौन सा गांवों में रह रहा था? आपको पता है कि राम के वक्त में कौन लोग थे? आपको पता है कृष्ण के वक्त में कौन लोग थे? सामान्य आदमी की कोई कथा बाकी नहीं रह जाती जो कि असली आदमी है।

थोड़े से अपवाद, थोड़े से एकसेप्शन्स याद रह जाते हैं। और उनकी याददाश्त पर हम निर्णय करते हैं कि पहले के लोग अच्छे रहे होंगे। बुद्ध अच्छे थे महावीर अच्छे थे। तो गांधी अच्छे थे तो हम अच्छे हैं? बल्कि सच्चाई यह है कि अगर सारे लोग अच्छे हों जाएं तो गांधी को याद रखने की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी। अगर महावीर के समय के सारे लोग अच्छे होते तो महावीर का नाम हम कभी का भूल गए होते। वह उस पूरे अंधेरे में एक आदमी चमकता हुआ था इसलिए दिखाई पड़ रहा है आज तक। अगर सारे लोग चमकते हुए होते वे महावीर कभी के भूल जाते, वे कृष्ण भी कभी के भूल जाते। ये दस पंद्रह लोगों के नाम हमें याद है केवल इसलिए कि इस पूरी अंधेरी रात में ये दस-पांच चमकते हुए सितारे हैं।

लेकिन आदमी की जिंदगी आज तक जमीन पर अंधेरे से भरी रही है। पंद्रह हजार युद्ध लड़े गए हैं पांच हजार वर्षों में। पंद्रह हजार युद्ध किन लोगों ने लड़े? अगर वे अच्छे लोग थे कौन लड़ रहा था? हिंदुस्तान की जमीन पर बुद्ध के समय में दो हजार राज्य थे। और हर रोज इस जमीन पर लड़ाई हो रही थी। कौन लड़ रहा था वह लड़ाई? और लड़ाई प्रेम से लड़ी जाती है? ईमानदारी से? लड़ाइयां कैसे लड़ी जाती हैं?

महाभारत हुआ हमारे इस मुल्क में, जिनको हम बहुत अच्छे लोग कहते थे वे भी अपनी औरत को जुए पर दांव में लगा सकते थे। कैसे अच्छे लोग रहे होंगे? और अच्छे लोग थे तो जमीन के लिए लड़े। सारे मुल्क को शायद दो चार हजार साल के लिए रीढ़ तोड़ दी। जुआ खेलते थे, औरत को दांव पर लगा सकते थे। अच्छे लोग थे?

बात असल यह है कि अतीत तो हमें भूल जाता है और वर्तमान हमें दिखाई पड़ता है। आप कहते हैं, पीछे के लोग अच्छे थे और आज के लोग अंधेरे में हैं आज तक जमीन पर जितनी किताबें लिखी गई हैं पुरानी से पुरानी किताब भी यही कहती है कि पहले के लोग अच्छे थे। वे पहले के लोग कब थे? आपने कोई एसी किताब पढ़ी है जो यह कहती हो आज के लोग अच्छे हैं।

चीन में सबसे पुरानी किताब है छह हजार वर्ष पुरानी वह भी कहती है कि पहले के लोग बहुत अच्छे थे आज के लोग बिलकुल बिगड़ गए हैं। ये जमाना अंधकार का आ

गया है। छह हजार वर्ष पुरानी किताब भी यही कहती है कि पहले के लोग अच्छे थे और आज का जमाना अंधकार का है। अगर आप उस किताब को पढ़ें तो ऐसा लगेगा हमारे जमाने के बाबत कह रहें हैं ये लोग।

नहीं, इसमें कोई बुनियादी भ्रम है। पहले के लोग अच्छे कहने का कारण यह नहीं है कि पहले के लोग अच्छे थे लेकिन आज के आदमी को कंडेम्न करना हो उसकी निंदा करनी हो तो इसके सिवाय कोई उपाय नहीं कि हम पहले के आदमी को अच्छा कहें और इसको नीचा दिखाएं। इसको नीचा दिखाने की हमारी बड़ी इच्छा है। जो हमारे साथ आदमी खड़ा है, उसे नीचा दिखाने की इच्छा है। इसको कैसे नीचा दिखाएं? इसको नीचा दिखाने का एक रास्ता है कि पहले के लोग बहुत अच्छे थे।

अगर पहले के लोग अच्छे थे तो ये बुरे लोग उन अच्छे लोगों से कैसे पैदा हो गए? अगर पहले की सभ्यता और संस्कृति अच्छी थी तो यह दुष्परिणाम कैसे आया? यह उसी का तो फल है। यह उसी का तो कांसिक्वेंस है। यह उसी में से तो निकला है। यह जो कुछ निकला है उससे ही पैदा हुआ है।

मैं क्या कहना चाहता हूं यह बात कह कर? मैं यह बात कह कर यह कहना चाहता हूं कि ये सवाल किसी युग का नहीं है कि आदमी अंधकार में है यह आदमी का चित्त जैसा है अभी और आज तक जैसा रहा है, उस चित्त से यह अंधकार पैदा हो रहा है, यह किसी युग की भूल नहीं है यह आदमी का चित्त जैसा है उसका परिणाम है। और जब तक हम आदमी के चित्त को बदलने की कीमिया, तरकीब, उसको बदलने की विधि नहीं समझ लेते हैं और जब तक हम बहुत बड़े पैमाने पर आदमी की चेतना को बदलने का उपाय नहीं करते हैं तब तक जमीन पर अंधकार रहेगा, यह किसी युग का सवाल नहीं है। ये सतयुग और कलियुग का सवाल नहीं है।

यह सवाल आदमी के मन का है और आदमी का मन वही है जो पांच हजार साल पहले था उसमें कोई फर्क नहीं पड़ा। यह आदमी का मन क्या है जो अंधकार ले आता है? और इधर पांच हजार सालों में हमने कोशिश की इसको बदलने की वह कोशिश असफल क्यों हो गई?

और हम आज भी वही दोहराते हैं। इस आदमी को बदलना है तो उन्हीं बातों को दोहराते हैं जो पांच हजार साल में नाकामयाब साबित हो गईं। फिर भी उन्हें बातों को दोहराते हैं तो यह जमाना आगे भी अंधकारपूर्ण रहेगा। अगर उन्हीं बातों को हम दोहराए चले गए। वे कौन सी बातें हैं जिनकी वजह से आदमी का चित्त नहीं बदल सका? कौन सा कारण है जिनकी वजह से आदमी वहीं-वहीं चक्कर काट रहा है जैसे कोल्हू का बैल चक्कर काटता हो? जमाने गुजर जाते हैं, सदियां गुजर जाती हैं, आदमी वहीं का वहीं है।

कौन सी बातें हैं? उनमें से एक बात सबसे शुरू में आपसे कहूं। निरंतर हमसे कहा जाता है कि आदमी को नैतिक होना चाहिए, मारल होना चाहिए। यह शिक्षा बहुत पुरानी है। यह कोई आज तो नहीं कहा जा रहा है, यह हमेशा से कहा जा रहा है फिर आदमी नैतिक क्यों नहीं हो गया? तो हम दोष देते हैं कि आदमी की कोई गलती है इसलिए नैतिक नहीं हो गया।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि कोई आदमी नैतिक हो ही नहीं सकता बिना धार्मिक हुए। और धार्मिक होना बड़ी दूसरी बात है। कोई आदमी नैतिक नहीं हो सकता बिना धार्मिक हुए। लेकिन हमको तो बताया जाता रहा है कि नैतिक हो जाइए तो फिर आप धार्मिक हो सकते हैं, बिना नैतिक हुए धार्मिक नहीं हो सकते। यह बात बिलकुल ही उल्टी और गलत है। नैतिकता धार्मिक मनुष्य की सुगंध है।

भीतर चित्त में धर्म हो तो जीवन में होती है नीति। अंतःकरण परिवर्तित हो जाए तो आचरण हो जाता है दूसरा। नीति का संबंध है आचरण से, धर्म का संबंध है अंतःकरण से। लेकिन पांच हजार वर्षों से हम कह रहे हैं आदमी को नैतिक बन जाने को और बिना अंतःकरण बदले हुए जो आदमी अपने आचरण को बदल लेता है वह नैतिक तो नहीं होता विकृत जरूर हो जाता है।

क्या मतलब मेरा यह कहने का? मेरा कहने का यह मतलब है कि जो आदमी अपने जीवन को नैतिक बनाने में लगता है वह क्या करेगा? अगर उसके भीतर सेक्स है काम है जो कि होना चाहिए और है। उसके जीवन का स्वभाव का हिस्सा है। तो वह क्या करेगा नैतिक बनने को? वह आदमी ब्रह्मचर्य की कसमे लेगा नैतिक बनने को।

ब्रह्मचर्य की कसमों से क्या होने वाला है? इतना ही होने वाला है कि वह आदमी अपने सेक्स को भीतर दबाए चला जाएगा, दबाए चला जाएगा। ऊपर से ब्रह्मचर्य को ओढ़ लेगा और भीतर सेक्स को दबा लेगा, सप्रेस कर लेगा। वह दबी हुई कामुकता, वह दबा हुआ सेक्स नष्ट नहीं होगा उसके भीतर उसके अचेतन मन की पर्तों में घूमने लगेगा। रात सपनों में आने लगेगा। कमजोर क्षणों में प्रकट होने लगेगा। वह उसके भीतर निरंतर मौजूद रहेगा और उसकी मौजूदगी उसको भयभीत कर देगी। वह घबड़ाया हुआ रहने लगेगा उसको अगर कहीं अगर स्त्री दिख जाए तो वह घबड़ाएगा वह आंख बंद कर लेगा। वह दूर भागेगा, जंगलों में जाएगा, बस्तियां छोड़ेगा क्योंकि भीतर भय है कि कहीं उसका ब्रह्मचर्य न टूट जाए। और ब्रह्मचर्य टूट जाने का भय क्यों है? भय है कि भीतर सेक्स की लहरें धक्के दे रही हैं। उनको वह ऊपर से दबाए हुए बैठा हुआ है।

एक छोटी सी कहानी कहूं उससे मेरी बात समझ में आए और मैं आगे बढ़ सकूं। एक छोटी सी पहाड़ी नदी को दो भिक्षु पार कर रहे थे। एक वृद्ध भिक्षु था और एक युवा। वृद्ध भिक्षु जैसे ही नदी के किनारे आया उसने देखा कि सांझ होने को है, सूरज ढलने को

है। पहाड़ी नदी है। और एक युवती नदी के किनारे खड़ी है, संभवत: उसे नदी पार होना है। लेकिन अकेले नदी में उतरने का साहस नहीं कर पा रही है। सहज ही उसके मन को ख्याल हुआ इसे हाथ का सहारा दे दूं और नदी पार करा दूं। लेकिन तीस वर्ष से उसने किसी स्त्री को छुआ नहीं था।

यह ख्याल आते ही कि मैं हाथ का सहारा दे कर नदी पार करा दूं। वह हैरान हो गया तीस साल से सोचता था कि जिस काम के ऊपर उसने वश पा लिया। जिस सेक्स को उसने जीत लिया, वह अत्यंत तीव्रता से उसके भीतर खड़ा हो गया। वह घबड़ाया, उसके हाथ पैर कंप गए, अभी उसने उस स्त्री को छुआ नहीं था। उसने आंखें झुका ली और वह नदी पार करने लगा और वह भगवान का नाम जपने लगा और सोचने लगा मैं भी कैसा नासमझ हूं। मैंने यह व्यर्थ की बात क्यों सोची? लेकिन दोनों बातें आने लगी मन में एक तरफ से ख्याल आने लगा उसे पार मैं करा ही देता तो क्या हर्ज था? और उसके पार कराने के साथ न मालूम कितना रस? और न मालूम कितनी कामनाएं उसके मन में उठने लगी और कितने सपने उसके मन में उठने लगे? आंख तो उसने मोड़ ली थी लेकिन आंख मोड़ने से कहीं कुछ होता है? वह स्त्री इतनी सुंदर न थी जितनी आंख मोड़ने से और सुंदर मालूम होने लगी। आंख उसने बंद कर ली थी, वह राम जप रहा था और नदी पार हो रहा था लेकिन भीतर कोई राम नहीं थे वही स्त्री खड़ी थी और बहुत सुंदर हो कर खड़ी हो गई थी।

बंद आंखों में चीजें और सुंदर हो आती हैं। खुली आंखों से चीजें इतनी सुंदर कभी भी नहीं हैं। क्योंकि बंद आंखों में चीजें पार्थिव नहीं रह जाती अपार्थिव हो जाती हैं सपना बन जाती हैं।

वह बहुत घबड़ाया और बहुत बेचैन हुआ, अपनी बहुत निंदा उसने की कि मैंने ये ही क्यों? प्रायश्चित करूंगा, दुखी होऊंगा। तीस वर्ष से जिसे मैंने छोड़ रखा था, अलग कर रखा था। वह मौजूद था, अलग तो हुआ नहीं था। वह नदी पार हो गया। लेकिन नदी पार होते ही उसे ख्याल आया कि जो भूल मैंने की है कहीं मेरा युवा साथी भी वही भूल तो नहीं कर रहा। वह उसके थोड़े पीछे आने को था। उसने लौट कर देखा वह हैरान रह गया। वह युवा लड़का उस लड़की को अपने कंधे पर बिठा कर नदी पार कर रहा था।

उसे कई तरह के भाव एक साथ उठ आए। कहीं ईर्ष्या भी आ गई होगी। क्योंकि वह चूक गया था इस सुख को उठाने से। वह वंचित रह गया था इस आनंद से और तब निंदा भी आई। और तब उसने सोचा कि आज जा कर गुरु को कहेंगे और यह तो बात बहुत गलत है। यह तो पापपूर्ण है कि संन्यासी और युवा युवती को कंधे पर उठाए। वह गुस्से में चल पड़ा। कोई दो मील के बाद उनका आश्रम था। थोड़ी देर बाद जब वे आश्रम पहुंच गए तो वह बूढ़ा सीढ़ियों पर खड़ा था। पीछे से आते युवक को उसने कहा कि सुनो यह बात

बरदाश्त के बाहर है यह निहायत पाप है कि तुम लड़की को कंधे पर उठाओ। और मैं असत्य न बोल सकूंगा मुझे गुरु से कहना पड़ेगा कि यह बात मेरी आंखों के सामने हुई है और यह हमारे आश्रम जीवन के विरुद्ध है। हमने ब्रह्मचर्य की कसम ली है और तुमने युवती को छुआ। न केवल छुआ बल्कि कंधे पर उठाया। न केवल छुआ बल्कि कंधे पर उठाया। वह युवक हंसने लगा और उसने कहा कि वृद्ध भिक्षु, मैं तो उस युवती को नदी के किनारे उतार भी आया कंधे से लेकिन आप अभी भी लिए हुए हैं।

दमित, सप्रेस्ड माइंड, चीजों को सिर पर तो नहीं लेता लेकिन फिर भी वे उसके सिर पर चढ़ जाती हैं और जीवन भर उसके साथ चलती हैं। उन्हें उतारना कठिन हो जाता है। क्योंकि जिसे हम दबाते हैं वह नष्ट नहीं होता वह हमारे भीतर छुप जाता है। हम जितना दबाते हैं वह हमारे भीतर और ज्यादा गहरे छुप जाता है। हम सत्य बोलने का व्रत लेते हैं और भीतर असत्य छिप के बैठ जाता है। हम ईमानदार होने की कसम खाते हैं और भीतर बेईमानी धक्के देती है। मनुष्य दो हिस्सों में टूट जाता है। एक जैसा वह दिखाई पड़ता है और एक जैसा वह है। और यह जीवन भर का संघर्ष। यह जीवन भर की पीड़ा नरक बना देती है।

अब इसमें दो ही रास्ते हैं अगर वह आदमी बहुत चालाक है, समझदार है, तो एक रास्ता पाखंड है। और वह रास्ता यह है कि वह ऊपर से तो जो दिखाई पड़ता है दिखता रहे और भीतर जो है छुपे रास्तों से उसकी तृप्ति का भी मार्ग खोज ले।

एक रास्ता तो यह है। और इसीलिए नैतिक शिक्षा का अनिवार्य परिणाम पाखंड हुआ है। सारी दुनिया और मनुष्य जाति पाखंडी हो गई है। उसको पाखंडी बनाने में नैतिक शिक्षा का हाथ है। जो यह सिखाती है कि सच बोलो बेइमानी मत करो। झूठ मत बोलो। क्रोध मत करो। वासना मत लाओ। जो हर चीज में इंकार सिखाती है, उसका परिणाम यह होगा कि आदमी दमन करेगा और दमन इतने परेशान कर देगा उसे कि वह छुपे रास्तों से प्रवेश करना चाहेगा। पाखंड पैदा होगा। और वह अगर जिद्दी हुआ और पाखंडी नहीं बना तो दूसरा विकल्प है कि वह पागल हो जाएगा। क्योंकि इतना टेंशन और इतना तनाव झेलना कठिन है। उस तनाव में, चिंता में, संताप में, वह टूट जाएगा और विक्षिप्त हो जाएगा।

इसलिए सभ्यता के विकास के साथ दो तरह की बातें विकसित हुईं हैं। पाखंड और पागलपन। क्या आपको पता है जितने हम सभ्य होते गए हैं उतनी ही हमारी संख्या पागलों की बढ़ती चली गई है। क्या आपको पता है जितने हम शिक्षित होते गए हैं उतने ही हमें पागलखाने बढ़ाने पड़ रहे हैं। क्या आपको पता है कि जो हमारी जमीन पर सबसे ज्यादा शिक्षित और सभ्य मुल्क है वही मुल्क सर्वाधिक मानसिक रोगों से भी पीड़ित है।

अमेरिका में प्रतिदिन कोई पंद्रह लाख से तीस लाख तक लोग अपनी मानसिक चिकित्सा के लिए सलाह ले रहे हैं। ये सरकारी आंकड़े हैं। और सरकारी आंकड़े कभी सच

नहीं होते। इससे ज्यादा लोग वहां खराब हालत में हैं। मानसिक चिकित्सकों की संख्या अमेरिका में एकदम तीव्रता से बढ़ती चली जाती है। अमेरिका सबसे ज्यादा सभ्य मुल्क है इसका यह सबूत है। और कल जब आप भी सभ्य हो जाएंगे तो आपको भी पागलों की संख्या इतनी ही बढ़ानी पड़ेगी। क्योंकि बिना पागल हुए कोई सभ्य नहीं हो सकता। वह मुल्क पूरी तरह सभ्य कहा जाएगा जिस मुल्क के सारे लोग पागल हो जाएं। वहां सभ्यता चरम उत्कर्ष पर पहुंच गई।

क्योंकि सभ्यता सिखाती है नैतिकता, और नैतिकता से पैदा होता है तनाव, द्वंद और कानफ्लिक्ट, वह चित्त को बांट देती है खंड-खंड कर देती है, वह खंड-खंड चित्त बड़ी बेचैनी में पड़ जाता है। तो एक रास्ता तो है कि वह पागल हो जाए। पागल हो कर आत्मघात कर ले। आत्म हत्या की संख्या भी सभ्यता के साथ बढ़ती है। दूसरा उपाय है कि वह बेईमान हो जाए और धोखा देने लगे बाहर से कुछ दिखाई पड़े भीतर से कुछ और हो जाए।

पीछे लंदन में सेक्सपीयर का एक नाटक चलता था। इंगलैंड के चर्च का एक बहुत बड़ा पादरी भी उस नाटक को देखने को उत्सुक था। लेकिन पादरी और नाटक देखने जाए, यह जरा अशोभन। क्योंकि यही पादरी तो समझाता रहा है कि नाटक देखना पाप है। अब यह ही कैसे इस नाटक को देखने जाए। लेकिन मन में उसके बड़ा लगाव था तो उसने नाटक के मैनेजर को एक पत्र लिखा और उस पत्र में लिखा कि मेरे मित्र बड़ी कृपा होगी। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जब भवन में अंधेरा हो जाता है तो पीछे के द्वार से मुझे भी भीतर आ जाने दिया जाए। नाटक मैं देखना चाहता हूं लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि लोग मुझे देखें। कोई पीछे का दरवाजा नहीं है आपके नाटकगृह में?

उस थियेटर के मैनेजर ने लिखा कि पीछे का दरवाजा है। और अक्सर हमें पादरियों के लिए उससे आने की व्यवस्था करनी होती है लेकिन एक बात मैं हमेशा बता देना पहले ही उचित समझता हूं। ऐसा दरवाजा तो है हमारे नाटकगृह में कि आप उससे आएं और लोग आपको न देख सकें लेकिन ऐसा कोई दरवाजा नहीं है जिसको परमात्मा न देखता हो। यह ख्याल में रखें और बराबर आ जाएं।

मुझे पता नहीं कि वह पादरी देखने गया या नहीं! लेकिन पीछे के दरवाजे खोजने की इच्छा होती है। ऊपर से नैतिकता ओढ़ लेते हैं फिर पीछे का दरवाजा खोजना पड़ता है। इससे पाखंड पैदा होता है इससे धोखा पैदा होता है और इस धोखे से मनुष्य के जीवन में जो भी श्रेष्ठतम है उसकी खोज असंभव हो जाती है। वह न केवल दूसरों को धोखा देता है बल्कि खुद को भी धोखा देने लगता है। यह है नैतिकता की शिक्षा.... जिसके ये परिणाम हैं।

क्या मैं यह कह रहा हूं कि आप अनैतिक हो जाएं? क्या मैं यह कह रहा हूं कि आप अपनी सारी नैतिकता छोड़ दें? क्या मैं यह कह रहा हूं कि क्रोध करें? क्या मैं यह

कह रहा हूं असत्य बोलें? नहीं मैं यह कह रहा हूं कि क्रोध और असत्य और लोभ और सब कुछ जिसको हम अनैतिक कहते हैं और निंदा करते हैं। ये सिर्फ लक्षण हैं बीमारी के यह खुद बीमारी नहीं है। इन लक्षणों से जो लड़ेगा वह बीमारी से मुक्त नहीं हो सकता।

एक आदमी को बुखार है उसके हाथ पैर गरम हैं तो उसके हाथ पैर हम ठंडे करने में लग जाएं और हम सोचें की गरमी है तो हाथ पैर हम इसके ठंडे कर दें। तो शायद हम मरीज को मार ही डालेंगे। बुखार गरमी का नाम नहीं है, गरमी तो केवल खबर है कि भीतर कोई बीमारी है और शरीर को उस बीमारी से लड़ना पड़ रहा है इसलिए शरीर गरम हो गया। गरमी तो लक्षण है बीमारी का गरमी से नहीं लड़ना है। गरमी तो मित्र है खबर दे रही है वह तो अगर शरीर गरम न हो और भीतर बीमारी रहे तो आदमी मर ही जाएगा उसका पता भी नहीं चलेगा। शरीर जल्दी से खबर देता है गरम हो कर कि भीतर कुछ गड़बड़ हो गई है उसे ठीक करो। लेकिन जो गरमी को ठीक करने में लग जाएगा वह भूल में पड़ गया। एक आदमी मेरे पास भागा हुआ आए कि मेरी मां बीमार है और मैं उसी का इलाज करने लगूं। तो उसकी मां तो मरेगी ही यह आदमी भी मरेगा। यह तो केवल खबर देने आया था। यह खुद बीमार नहीं था।

क्रोध इस बात की खबर है कि भीतर आत्मा अंधकार में है, बीमार है, अस्वस्थ है। बेइमानी, असत्य, इस बात की खबर है कि भीतर प्राण स्वस्थ नहीं है। ये सारी खबरें हैं, ये लक्षण हैं। यह बीमारी नहीं है। बीमारी कुछ और है। बीमारी दूसरी ही है और बीमारी एक ही है। और वह बीमारी है आत्म अज्ञान। स्वयं के भीतर जो चेतना है उसको न जानना, उसको न पहचानना। वह जो सेल्फ इगनोरेंस है, वही है बीमारी, बाकी सब उससे पदा होनेवाले लक्षण हैं।

नीति इन लक्षणों का इलाज करती है। इसलिए नीति कोई उपाय नहीं है। धर्म उस आत्मा में जो अस्वास्थ्य है वह जो आत्मा का अज्ञान है उससे मुक्त करता है और उससे मुक्त होते ही ये लक्षण एकदम विलीन हो जाते हैं समाप्त हो जाते हैं।

जैसे ही भीतर कोई स्वयं को जानने में समर्थ होता है वैसे ही वह हंसेगा, हैरान हो जाएगा कि मैं क्रोध भी करता था। उसे आप मजबूर करें क्रोध करने को तो भी वह क्रोध न कर सकेगा। उसे आप झूठ बोलने को कहे तो वह न बोल सकेगा। क्योंकि अब वह जानता है और अब वह समझता है, क्रोध क्या था और वह कैसे हुआ था? स्वस्थ आदमी से आप कहें कि जरा फीवर ला कर दिखाओ तो वह न ला सकेगा। क्योंकि फीवर लाना स्वस्थ आदमी के हाथ के बस की बात नहीं है। बुखार ले आना उसके हाथ की बस की बात नहीं है बीमारी थी तो बुखार था।

बुद्ध एक बार एक गांव के पास से निकलते थे। उस गांव के लोग उनके शत्रु थे। हमेशा ही जो भले लोग हैं, उनके हम शत्रु रहें हैं। उस गांव के लोग भी हमारे जैसे लोग

होंगे। तो वे बुद्ध के शत्रु थे। बुद्ध उस गांव से निकले तो उन गांव के लोगों ने रास्ते पर उसे घेर लिया। और उन्हें बहुत गालियां दी और बहुत अपमान किया। बहुत अपशब्द बोले। बुद्ध ने सुना और बुद्ध ने फिर उनसे कहा मेरे मित्रो तुम्हारी बात पूरी हो गई हो तो मैं जाऊं मुझे दूसरे गांव जल्दी पहुंचना है। वे लोग थोड़े हैरान हुए होंगे। और उन्होंने कहा कि हमने क्या कोई बातें कहीं हैं? हमने तो गालियां दी हैं सीधी और स्पष्ट। बुद्ध ने कहा तुमने थोड़ी देर कर दी। अगर तुम दस वर्ष पहले आए होते तो मजा आ गया होता। हम भी तुम्हें गालियां देते हम भी क्रोधित होते। थोड़ा रस आता बातचीत होती तुम थोड़ी देर कर के आए हो। अब मैं उस जगह हूं कि तुम्हारी गाली लेने में असमर्थ हूं। तुमने गाली दी वह तो ठीक लेकिन तुम्हारे देने से ही क्या होता है? मुझे भी तो भागीदार होना चाहिए। मैं उसे लूं तभी तो उसका परिणाम हो सकता है। लेकिन मैं तुम्हारी गाली लेता नहीं। क्योंकि कोई पागल ही गाली ले सकता है कोई समझदार गाली कैसे लेगा? मैं दूसरे गांव से निकला था वहां के लोग मिठाइयां लाए थे भेंट करने, मैंने उनसे कहा कि मेरा पेट भरा है तो वे मिठाइयां वापस ले गए। जब मैं न लूंगा तो वे मुझे कैसे दे जाएंगे? बुद्ध ने उन लोगों से पूछा कि वे लोग मिठाइयां ले गए उन्होंने क्या किया होगा? एक आदमी ने भीड़ में से कहा कि उन्होंने अपने बच्चों को बांट दिए होंगे परिवार में दे दिए होंगे। बुद्ध ने कहा मित्रो अब तुम बड़ी मुश्किल में पड़ गए तुम गालियां लाए हो मैं लेता नहीं। अब तुम क्या करोगे? घर ले जाओगे, बांटोगे? मुझे तुम पर बड़ी दया आती है, अब तुम इन गालियों का क्या करोगे? क्योंकि मैं लेता नहीं। क्योंकि जिसकी आंख खुली है वह गाली लेगा? और जब मैं लेता ही नहीं तो क्रोध का सवाल ही नहीं उठता। जब मैं ले लूं तब क्रोध उठ सकता है।

आंखें रहते हुए मैं कैसे कांटों पर चलूं? और आंखें रहते हुए मैं कैसे गालियां लूं? और होश रहते मैं कैसे क्रोधित हो जाऊं? मैं बड़ी मुश्किल में हूं। मुझे क्षमा कर दो। तुम गलत आदमी के पास आ गए। मैं जाऊं मुझे दूसरे गांव जाना है। उस गांव के लोग कैसे निराश नहीं हो गए होंगे? कैसे उदास नहीं हो गए होंगे?

बुद्ध ने क्या कहा..... ये बुद्ध ने क्रोध को दबाया नहीं है। ये बुद्ध भीतर जाग गया है इसलिए क्रोध अब नहीं है।

भीतर आत्मा जाने और जागे तो नीति तो वैसे ही चली आती है जैसे आदमी के पीछे छाया आती है। आदमी के पीछे छाया आती है। वैसे ही नैतिकता धर्म के पीछे आती है अपने आप, अनिवार्य। वो तो अपरिहार्य है वह तो आएगी। उसे लाने का कोई सवाल नहीं है। इधर हम हजारों वर्ष से आदमी को नैतिक लगाने के लिए समझा रहें हैं इसलिए नैतिकता नहीं आ पाई। आया है पाखंड, आया है पागलपन।

नैतिकता धर्म तक नहीं ले जाती लेकिन धर्म जरूर नैतिकता को ले आता है। धर्म की सुगंध है नीति। अनिवार्य सुगंध है। भीतर धर्म का फूल खिलता है जीवन में आचरण में

सुगंध फैल जाती है। तब क्रोध को मिटाना नहीं पड़ता, क्रोध पाया ही नहीं जाता है और जो क्रोध से जो इनर्जी और जो ताकत और जो शक्ति प्रकट होती थी, वही शक्ति प्रेम से प्रकट होने लगती है। और जो सेक्स था वही शक्ति ब्रह्मचर्य बन जाती है। सेक्स को दबाने से नहीं बल्कि स्वयं को जानने से। जीवन रूपांतरित होता है। ट्रांसफारमेशन हो जाता है।

एक आदमी अपने घर के बाहर खाद के ढेर लगा ले तो उस घर में रहना मुश्किल हो जाएगा, उस घर में दुर्गंध भर जाएगी। उस घर के पास से निकलना मुश्किल हो जाएगा। उस घर के वासी बहुत कठिनाई में पड़ जाएंगे। वह घर नरक हो जाएगा। लेकिन अगर वही आदमी उस खाद को अपनी बगिया में डाल दे और बीज बो दे तो उस घर में फूल खिल जाएंगे, उस घर में सुगंध फैल जाएगी। उसके रास्तों से निकलने वालों को भी सुगंध का फायदा मिलेगा।

यह सुगंध क्या है? यह वही दुर्गंध है जो खाद में छिपी थी। वही रूपांतरित हो कर पौधों में जा कर सुगंध बन गई है। प्रेम क्या है? वही जो क्रोध था। और ब्रह्मचर्य क्या है? वही जो सेक्स था। ये दुश्मन नहीं हैं एक दूसरे के ये उन्हीं शक्तियों के रूपांतरण है। वे ही शक्तियां परिवर्तित हो जाती हैं। इसलिए अगर आपके भीतर क्रोध है तो आप धन्य हैं। क्योंकि आपके भीतर ताकत है और प्रेम का जन्म हो सकता है। और अगर आपके भीतर सेक्स है तो आप धन्य हैं। क्योंकि वही ताकत ब्रह्मचर्य बन सकती है। वही ताकत परमात्मा तक पहुंचने का मार्ग बन सकती है।

इसलिए दुखी न हों और आत्म-निंदा न करें कि मेरे भीतर क्रोध है काम है फलां है, ढिकां है। आत्म निंदा न करें यह नैतिकता आत्म निंदा सिखाती है। सेल्फ कंडेमनेशन सिखाती है। और जो आदमी खुद की निंदा करने लगता है जो आदमी अपनी ही आंखों में गिर जाता है, उस आदमी के विकास के सब द्वार बंद हो गए। उस आदमी का उर्ध्वगमन बंद हो गया, अब वह ऊपर नहीं जाएगा। अब उसकी नीचे की यात्रा शुरू हो गई। वह जितना अपने की निंदा करेगा उतना ही नीचे गिरता जाएगा और नीचे गिरता जाएगा।

इसलिए जिन कौमों ने बहुत नैतिकता की बातें की हैं उनका आदमी एकदम कुरूप हो गया है। एकदम अग्लि हो गया है। जिन कौमों ने नैतिकता की बहुत बातें की हैं उनका आदमी दीन-हीन हो गया। उसके चित्त में बड़ी ग्लानि, आत्म ग्लानि पैदा हो गई है। उसके भीतर वह गौरव और गरिमा नष्ट हो गई है क्योंकि सब पाप ही पाप उसको दिखाई पड़ता है। क्रोध, ईमान नहीं है, बेईमानी है, चोरी है यह सब क्या है? उसको सब भीतर खोजता है तो पाप ही पाप दिखाई पड़ता है। और इस पाप ही पाप में वह दबा जाता है टूटा जाता है। नष्ट हुआ जाता है।

इस ग्लानि को छोड़ दें। यह ग्लानि बहुत अशुभ है। यह जीवन की शक्तियां हैं जिनकी आप निंदा कर रहें हैं। यह शक्तियां आज जिस रूप में प्रकट हो रहीं हैं वह रूप

जरूर शुभ नहीं है। लेकिन यही शक्तियां दूसरे रूप में प्रकट हो सकती हैं और वह रूप बहुत शुभ हो सकता है। उसकी बदलाहट का रास्ता सीधी लड़ाई नहीं है। उसके बदलाहट का रास्ता बहुत भिन्न है।

जैसा मैं निरंतर कहता हूं। अगर इस कमरे में अंधकार भरा हो और हम उसको लड़ के धक्के दे कर निकालने लगें तो हम निकाल न पाएंगे। क्यों? अंधेरा बहुत ताकतवर है इसलिए? शायद जब न निकाल पाएंगे तो हमको यही ख्याल पैदा होगा कि इतने लोग हैं हम और इस कमरे के अंधेरे को निकालते हैं और अंधेरा नहीं निकालता। हम कमजोर हैं, अंधेरा ताकतवर है। यही ख्याल पैदा होगा। सीधा लाजिक यही है। हम निकालते हैं और नहीं निकलता हम हार जाते हैं, वह जीत जाता है। वह ताकतवर है।

लेकिन मैं आपसे कहता हूं अंधेरा ताकतवर नहीं है। अंधेरा है ही नहीं इसलिए आप नहीं निकाल पाते। अगर वह होता तो हम अपनी ताकत बढ़ा सकते थे। डाइनामाइट ले आते और तलवारें ले आते और एटम बम ले आते और निकाल देते। लेकिन हम कुछ भी ले आएं हम निकाल न पाएंगे अंधेरा है ही नहीं। फिर भी दिखाई तो पड़ता है और जब मैं कहता हूं कि अंधेरा नहीं है तो मेरा मतलब क्या है? मेरा मतलब है अंधेरा प्रकाश की एबसेंस है, अनुपस्थिति है। अंधेरा किसी चीज की प्रेजेंस नहीं है। अंधेरा कोई चीज नहीं है। अंधेरा केवल अभाव है, केवल एबसेंस है। प्रकाश नहीं है इसी का दूसरा नाम अंधेरा है। अंधेरा अलग से कुछ भी नहीं है। इसलिए आप दीया जला लें और खोजें अंधेरा कहां है। तो वह अंधेरा आपको नहीं मिलेगा। शायद आप सोचेंगे बाहर चला गया तो आप गलती में हैं। आप गलती में हैं अगर सोचते हैं बाहर चला गया। बाहर भी प्रकाश जला लें सब तर तरफ और यहां दीया जलाएं तो आपको अंधेरा कहीं से जाता हुआ दिखाई नहीं पड़ेगा। अंधेरा था ही नहीं, चला गया, यह भाषा की गलती है। आ गया, यह भी भाषा की गलती है। केवल प्रकाश आता है और प्रकाश जाता है। अंधेरा न जाता है और न अंधेरा आता है। अंधेरा नहीं है।

इसलिए जो लोग अंधेरे से सीधी लड़ाई लड़ेंगे वे पागल हो जाएंगे। और या पाखंडी हो जाएंगे। अगर कोई आदमी एकदम आ कर घर के बाहर कहे कि हां मैंने अंधेरे को निकाल कर बाहर कर दिया तो समझ लेना यह पाखंडी है। और अगर वह कहे कि लड़ रहा हूं, लड़ रहा हूं, परेशान हुआ जा रहा हूं, अंधेरा निकलता नहीं है लेकिन लड़ाई तो जारी रखनी है, अंधेरे को निकालना ही है तो समझना की यह आदमी पागल होने के रास्ते पर चल रहा है।

अंधेरे को निकालने का तो कोई रास्ता नहीं है लेकिन प्रकाश को जलाने का रास्ता है। और अब तक अंधेरे को निकालने में लगे रहें हैं। हम बच्चों को सिखाते हैं क्रोध मत

करो, बेईमानी मत करो, यह न करा,वह न करो। सब न करो, सब अंधेरे को निकालने की बातें हैं। प्रकाश को जलाना सिखाइए। अंधेरे को निकालने का कोई सवाल नहीं है।

भीतर जो चेतना है जो कानशेशनेस है उसे जगाने का रास्ता है उसे जगाइए। उसे उठाइए उभारिए वह जो भीतर सोई है चेतना उसे जगाइए वह जितनी जगेगी उतना ही अंधेरा नहीं पाया जाएगा। वह दीया जल जाए, अंधेरा नहीं है।

आत्म ज्ञान वह दीया है। धर्म उस दीये को जलाने का उपाय है। नीति उपाय नहीं है। नीति से ज्यादा घातक, ज्यादा पायजनस, ज्यादा विषाक्त और जहरीली और कोई बात नहीं है। और दुनिया ये जो इतनी अनैतिक दिखाई पड़ रही है,यह नैतिक शिक्षा का परिणाम है। यह मत सोचिए कि नीति की कमी के कारण के ऐसा हो रहा है। यह नीति की अति शिक्षा की प्रतिक्रिया है।

अब ऊब गए पांच हजार साल में लोग इस शिक्षा से और कुछ नहीं हुआ इस शिक्षा से। तो अब वे इसके विरोध में खड़े हैं। अब वे कहते हैं कि कुछ नहीं हुआ इससे हम शराब पीएंगे, नाचेंगे, कूदेंगे; जो हमारे मन में होगा हम करेंगे। देख ली तुम्हारी शिक्षा और देख ली तुम्हारी सभ्यता। अब इसके विरोध में अब वे खड़े हैं। बिटनेक हैं और बीटेल हैं। और सारी दुनिया के क्रोधी, प्रतिक्रिया से भरे हुए युवक हैं। नई पीढ़ियां हैं वे कह रहें हैं, तोड़ो तुम्हारे चर्च मर्च। हो गई बकवास बंद करो यह। पांच हजार साल से देख ली तुम्हारी सारी बातें, तुम्हारे प्रीचर और तुम्हारे संन्यासी और तुम्हारे उपदेश और तुम्हारे धर्म गुरु देखे जा चुके अच्छी तरह से, दुनिया जरा भी नहीं बदली। अब क्षमा करो अब तुम जो जो कहते थे उसको हम तोड़ को दिखा देंगे और बता देंगे कि सब गड़बड़ है। और हमको जैसा जीना है हम जीएंगे। अब हम नहीं रुकना चाहते इन सीमाओं में। यह उसका रीएक्शन है। जो पांच हजार साल में किया गया उसकी प्रतिक्रिया है।

बच्चे ऊब गए और घबड़ा गए। और बच्चे कहते हैं हम तोड़ देंगे यह सब। अब हमें ये नहीं चलेंगी सारी बातें अब हमको जो ठीक लगेगा चाहे वह कोई गलत कहता हो, बाइबिल गलत कहती हो और मनु गलत कहते हों और कनफ्यूसियस गलत कहता हो कोई भी गलत कहता हो। सुन लिया हमने अब हम नहीं सुनना चाहते। यह उसी शिक्षा का रियेक्शन है। उस शिक्षा का विरोध है यह। वह शिक्षा असफल हो गई है। उस असफलता के लिए लड़के आज बदला ले रहे हैं। पुरानी पीढ़ियों से। यह बहुत स्वाभाविक है।

क्या करें इसमें? क्या उसी शिक्षा को दोहराए चले जाएं? मैं आपसे कहता हूं आप मुर्दों को जिलाने की कोशिश कर रहें हैं। अब नहीं चलेगा यह। वह शिक्षा नहीं दोहराई जा सकती है। वह मर चुकी है। उसे दफना दें। उसे दोहराने की कोई जरूरत नहीं है। जितना आप दोहराएंगे लड़के उसकी प्रतिक्रिया में उतना ही विरोध करेंगे। उसके खिलाफ उतना ही

विरोध चलेगा। आप अपने हाथ से आने वाली पीढ़ियों को नरक में ढकेल रहें हैं। ढकेल देंगे।

निषेध विरोध लाता है। यहां खिड़की पर हम एक तख्ती टांग दें और लिख दें कि यहां झांकना मना है। फिर आपमें से कोई इतना ताकतवर है जो बिना झांके निकल जाए। और अगर निकल गया तो रात भर पछताएगा और नींद नहीं आ सकेगी। और सपने में देखेगा कि पहुंच गया उसी दरवाजे पर और पट्टी उघाड़ कर देख रहा है कि भीतर क्या है? शायद जिंदगी भर वह परेशान रहे और बार बार यह ख्याल आ जाए कि क्या था उस दरवाजे के भीतर जिसको मैं छोड़ आया। निषेध, मत झांको, झांकने की इच्छा पैदा करता है।

नैतिक शिक्षा ने अनैतिक होने की भाव दशा पैदा कर दी है। मत करो, मत करो, मत करो, सब तरफ से यह आवाज भीतर बच्चों के मन में यह प्रतिक्रिया बन गई कि करो, करो, करो।

फ्रायड अपनी पत्नी और अपने बच्चे के साथ एक दिन एक बगीचे में गया। छोटा बच्चा था, उसकी पत्नी ने कहा कि देखो, पास ही रहना और जो फव्वारा है बगीचे में, उस तरफ मत जाना। वे दोनों गपशप करते रहे और घूमते रहे। सांझ ढल गई और रात उतर आई और जब वे लौटने लगे तो उन्होंने देखा कि बच्चा नदारद है। उसकी पत्नी घबड़ाई और उसने कहा कि अब कहां ढूढेंगे इतनी बड़ी रात इतना बड़ा बगीचा। दरवााजे बंद होने को आ गए हैं वह बच्चा कहां गया? तो फ्रायड ने यह कहा कि पहले मुझे यह बताओ तुमने कहीं जाने को मना तो नहीं किया था। उसने कहा मैंने मना किया था कि फव्वारे पर मत जाना। उसने कहा चलो पहले फठवारे पर देख लें। सौ में से निन्यानबे माएके तो ये हैं कि वह फठवारे पर हो, अगर उसमें थोड़ी भी बुद्धि है तो फव्वारे पर होगा। अगर बिलकुल बुद्धिहीन है तो कहीं और भी हो सकता है। वे गए वह फव्वारे पर पैर लटकाए हुए बैठा था।

यह बच्चों में प्रतिक्रिया आई है यह बुद्धिमत्ता का लक्षण है। बुद्धिहीन रहे होंगे वे लोग जिन्होंने इसके खिलाफ विरोध नहीं किया। बढ़ती हुई बुद्धिमत्ता और विचार इसका विरोध करेगी। क्योंकि निषेध का विरोध बिलकुल स्वाभाविक है। फिर अब हम क्या करें? जाने दें गर्त में, जो हो होने दें। नहीं यह मैं नहीं कह रहा हूं। मेरी बात को गलत न समझ लेना। मैं यह कह रहा हूं कि हम जो कर रहे थे वह गलत था। कुछ और किया जा सकता है।

निषेध न करें। यह न कहें कि यह न करो यह न करो यह न करो। चित्त पर यह भाव न लौं। बल्कि क्या करो? किसको जगाओ ? कोई पाजिटीव, कोई विधायक साधना जीवन में चाहिए, जिससे आत्मा जगे, जागरूक हो। तो आज की संध्या तो मैं इतना ही कहूंगा निषेधात्मक नीति अर्थहीन है अर्थहीन ही नहीं, व्यर्थ है, व्यर्थ ही नहीं घातक है। विधायक धर्म, पाजिटीव रीलिजन, निगेटीव मारलिटी नहीं। विधायक धर्म क्या है और कैसे

उपलब्ध हो सकता है? संभव नहीं होगा कि अभी मैं उसकी बात करूं। कल सुबह मैं विधायक धर्म की बात करने को हूं। कल सुबह मैं चर्चा करूंगा कि धर्म क्या है? अभी तो मैं कहता हूं कि नीति जो कुछ भी है वह शुभ नहीं है।

एक अंतिम बात जरूर आपसे कह दूं। अगर भीतर विधायक धर्म का दीया जल जाए तो सारा जीवन बदल जाता है। क्योंकि रूट्स, जड़ों को हम पकड़ लेते हैं।

माओत्से तुंग, अपने बचपन की एक घटना कहा है। कहा है कि मैं छोटा था मेरी मां कि एक बहुत खूबसूरत बगिया थी। उस बगिया में बड़े प्यारे फूल लगते थे। सारे गांव के लोग उस बगिया के फूलों को देख कर हैरानी में रह जाते थे और दूर-दूर के गांवों के लोग उन फूलों को देखने आते थे। मां बीमार पड़ी। उसे बीमारी की उतनी चिंता न थी जितनी अपनी बगिया की थी कि उसके फूलों का, उसके पौधों का क्या होगा? कहीं वे बिगड़ न जौं, कहीं वे सूख जाएं। उसने बड़े जीवन भर की मेहनत से उस बगिया को खड़ा किया था। उसने खुद मेहनत की थी। वह चिंतित थी तो माओ ने अपनी मां को कहा कि चिंता न करें मैं आपकी बगिया की देखभाल कर लूंगा। मैं फिकर कर लूंगा आप चिंता न करें। और वह सुबह से शाम तक उस बगिया की फिकर करने लगा। लेकिन दो चार दिन बीते कि उसको हैरानी हुई। पौधे सूखने लगे और कुम्हलाने लगे। तेज धूप के दिन थे और बगिया मुर्झाने लगीं और जो कलियां आई थीं वे कलियां ही रह गईं, फूल न पाईं। वह बड़ा चिंतित हुआ और ज्यादा मेहनत करने लगा। सुबह से शाम बगिया में ही मेहनत करता लेकिन पंद्रह दिन बाद मां जब थोड़ी ठीक हुई और बगिया में आ सकी तब तक बगिया बरबाद हो गई थी। पौधे कुम्हलाए हुए खड़े थे। पत्ते सूख गए थे। उसकी मां हैरान हुई उसने कहा तुम दिन भर रहते थे, यह क्या हाल हुआ? माओ ने कहा मैं तो एक-एक फूल को पानी पिलाता था। एक-एक पत्ते को पोंछता था। एक-एक फूल को चूमता था कि बढ़ो, बड़े हो जाओ लेकिन पता नहीं क्या हुआ कि यह बगिया सब सूख गई?

उसकी मां हंसी और उसने कहा पागल, फूलों में फूलों के प्राण नहीं होत, प्राण होते हैं जड़ों में। तू फूलों को नहलाता रहा और जड़ों की कोई फिकर नहीं की। जड़ें दिखाई नहीं पड़तीं, अदृश्य हैं। फूल दिखाई पड़ते हैं, दृश्य। लेकिन जो दृश्य है उसकी जड़ें अदृश्य में हैं। जो दिखाई पड़ता है उसकी जड़ें उसमें हैं, जो दिखाई नहीं पड़ता। अगर उसकी तुमने फिकर की होती तो फूलों की कोई फिकर करने की जरत नहीं थी। वे अपनी फिकर खुद कर लेते। अगर तुमने जड़ों में पानी दिया होता तो फूल तो अपने से आ जाते, पत्ते अपने से ताजे हो जाते, वे तो जड़ों की ताजगी से अपने आप ताजे हो जाते हैं। लेकिन तू तो पत्तों और फूलों को नहलाता रहा और जड़ें सूखती चली गईं। जड़ें सूख गईं तो पत्तों और फूलों को कितना भी नहलाएं तो कुछ भी नहीं हो सकता।

अज्ञात की ओर

मैंने जब यह बात सुनी तो मैं हैरान हुआ यह बात तो पूरे आदमी की जिंदगी के बाबत सच है। हम फूलों को संभाल रहें हैं और जड़ों को भूल गए हैं। नीति तो केवल फूल है। सुंदर-सुंदर फूल हैं सत्य के, अहिंसा के, प्रेम के, करुणा के, बड़े सुंदर हैं और जिस जीवन में खिलते हैं वह बहुत धन्य है। लेकिन वे फूलों की जड़ें आत्मा में हैं और जो उन फूलों को ही संभालता है उसकी आत्मा की जड़ें सूख जौंगी, उसकी बगिया में फूल न खिलेंगे। फिर एक रास्ता है,बाजार में प्लास्टिक के कागज के फूल मिलते हैं वह उनको खरीद लाएगा और उनको अपने ऊपर से चिपका लेगा और फिर उन्हीं फूलों को मानकर जी लेगा।

हमारी सब अहिंसा और सब प्रेम और सब सत्य उधार और बाजार से खरीदा हुआ है। वह ऊपर से चिपकाया हुआ है, वह कागज के फूलों से ज्यादा नहीं। उसकी जड़ें धर्म की आत्मा से नहीं निकली हैं, इसलिए तो कैसे हम धर्म की जड़ों को पकड़ पाएं? जीवन की जड़ों को, वह जो रूट्स है हमारे भीतर, उनको हम कैसे पानी दें पाएं? वह बात तो अभी मैं नहीं करूंगा। वह कल सुबह के लिए छो़ड देता हूं। वह कल सुबह मैं आपसे बात करूंगा।

मेरी इन बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना है। हो सकता है कि उनमें से बहुत सी बातों ने बड़ी चोट पहुंचाई हो। अगर पहुंचाई हो तो मैं बहुत आनंदित हो जाऊंगा। क्षमा नहीं मांगूंगा। क्योंकि मैं चाहता हूं कि चोट पहुंचे। चोट पहुंचती है तो चिंतन पैदा होता है। धन्य भागी हैं वे जिनको चोट पहुंच जाती है। अभागे तो वे हैं जो बैठे सुनते रहते हैं, उनको कोई चोट भी नहीं पहुंचती। उनको कोई परेशानी भी नहीं होती। उनको कोई बेचैनी भी नहीं होती। उनमें कोई चिंतन भी पैदा नहीं होता।

तो जिन जिन मित्रों को चोट पहुंची हो उनका मैं बहुत अनुगृहीत हूं और जिनको न पहुंची हो तो अगली बार आऊंगा तो और ज्यादा चोट पहुंचाने की कोशिश करूंगा ताकि उनको भी पहुंच जाए।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना उससे बहुत-बहुत धन्यवाद। अंत में सबके भीतर सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

अज्ञात की ओर सातवां प्रवचन

अज्ञात की ओर

सातवां प्रवचन

सूरत 30 जून 1967 संध्या

बोध क्रांति

मेरे प्रिय आत्मन,

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी चर्चा शुरू करना चाहूंगा। एक राजमहल के द्वार पर बहुत भीड़ लगी हुई थी। भीड़ सुबह से लगनी शुरू हुई थी, दोपहर आ गई थी और भीड़ बढ़ती चली गई थी। जो भी उस द्वार पर आ कर रुका था वह रुका ही रह गया था। वहां कोई बहुत अभूतपूर्व घटना घट गई थी। और जिसको भी राजधानी में खबर लगी वह भागा हुआ महल की तरफ चला आ रहा था। सांझ भी आ गई। करीब करीब सारी राजधानी महल के द्वार पर इकट्ठी हो गई थी। लाखों लोग इकट्ठे थे।

उस द्वार पर सुबह-सुबह एक भिक्षु आया था। और उस भिक्षु ने उस राजा से कहा था, मुझे कुछ भिक्षा मिल सकेगी? राजा ने कहा था कोई कमी नहीं है, तुम जो चाहो मांग लो। उस भिखारी ने एक बड़ी अजीब शर्त रखी। उसने कहा कि मैं भिक्षा तभी लेता हूं जब मुझे यह आश्वासन मिल जाए, यह वचन मिल जाए कि मेरा पूरा भिक्षा पात्र भर दिया जाएगा। मैं अधूरा भिक्षा पात्र लेकर नहीं जाऊंगा। तो यदि यह वचन देते हों कि मेरा पूरा भिक्षा पात्र भर देंगे तो मैं भिक्षा लूं अन्यथा मैं किसी और द्वार पर चला जाऊं।

ऐसा शर्त वाला भिखारी कभी देखा नहीं गया था। और यह शर्त कोई इतनी बड़ी भी न थी कि राजा के द्वार से उसे लौटना पड़े। राजा हंसा और उसने कहा तुमने मुझे क्या समझ रखा है? क्या मैं तुम्हारे इस छोटे से भिक्षा पात्र को न भर सकूंगा? शायद तुम सोचते हो कि मैं धन धान्य में कुछ कम हूं? और एक भिखारी का भिक्षा पात्र भी न भर सकूंगा।

उसने अपने वजीरों से कहा कि जाओ और अन्न के दानों से नहीं बल्कि हीरे मोतियों से इसके भिक्षा पात्र को भर दो। उसने कहा शर्त मुझे स्वीकार है। राजा हंसा था यह कह कर लेकिन भिखारी भी हंसा और उसने कहा कि एक बार फिर सोच लें। क्योंकि न मालूम कितने लोगों ने यह शर्त स्वीकार की है और वे इसे पूरा नहीं कर पाए।

राजा ने कहा कि कैसे पागलपन की बातें करते हो वजीर से कहा समय मत खोओ, जाओ और उसके भिक्षा पात्र को बहुमूल्य पत्थरों से भर दो। वजीर बहुत से हीरे मोती ले कर आया। उस राजा के पास कोई कमी न थी हीरे मोतियों की। अकूत उसके खजाने थे और उस भिखारी के भिक्षा पात्र में डाले। लेकिन डालते ही भूल पता चल गई। भिक्षा पात्र में डाले गए मोती हीरे कहीं खो गए और पात्र खाली का खाली रहा। फिर और ला कर

डाले गए फिर और ला कर डाले गए और वे जो अकूत खजाने थे वे खाली होने लगे। सुबह की दोपहर आ गई, भिक्षा पात्र खाली का खाली रहा।

राजा घबड़ाया, कठिनाई खड़ी हो गई थी। वचन दिया था लेकिन न मालूम कैसा था यह भिक्षा पात्र सांझ हो गई। राजा भी अड़ा हुआ था कि भर देगा उसे लेकिन राजा भी छोटा पड़ गया। भिक्षा पात्र बहुत बड़ा था। वह नहीं भरा, नहीं भरा। और सांझ आखिर राजा को उस भिक्षु के पैरों पर गिर जाना पड़ा और माफी मांग लेनी पड़ी। उसने कहा कि मुझे माफ कर दें, भूल हो गई।

लेकिन मैं यह पूछना चाहता हूं और यह उत्तर मिल जाएगा तो मैं समझूंगा कि मैं माफ कर दिया गया। यह भिक्षा पात्र क्या है? यह कोई जादू है? यह क्या है रहस्य? यह क्या है मिस्टरी? छोटा सा पात्र है और भरता नहीं और मेरे खजाने खाली हो गए।

उस भिक्षु ने जो कहा, उसने कहा कि न तो कोई जादू है और न कोई रहस्य। मैं एक मरघट से निकलता था। एक आदमी की खोपड़ी पड़ी मिल गई। उससे ही मैंने यह भिक्षा पात्र बना लिया। और मैं खुद ही हैरान हो गया यह भरता नहीं है। सच्ची बात यह है आदमी की खोपड़ी कभी भी भरी नहीं है।

उस राजमहल के द्वार पर यह जो घटना घटी थी। कोई रहस्य नहीं है इसमें। कोई मिस्टरी नहीं है। हम सब जानते हैं कि हमारी खोपड़ी भारती नहीं। मनुष्य का मन कुछ ऐसा बना है कि भरता नहीं। और मनुष्य को, मन के भरने की जो दौड़ है, वही संसार है। और इस सत्य को जान लेना कि मनुष्य का मन भरता नहीं, धर्म की शुरुआत है, धर्म का प्रारंभ है।

धर्म से मेरा कोई संबंध हिंदू और मुसलमान और ईसाई और जैन से नहीं है। ये धर्म हैं भी नहीं। अगर ये धर्म होते तो दुनिया धार्मिक हो गई होती। कोई हिंदू है, कोई मुसलमान है, कोई जैन है। और इस होने की वजह से ही वह धार्मिक नहीं है। धार्मिक होना कुछ बात ही और है। धार्मिक होना एक आंतरिक घति है। एक रिवोल्यूशन है जो चित्त में घटित हो जाती है। उसका कोई एफलिएशन से, कोई आगघ्नाइजेशन से, कोई संगठन, किसी मंदिर और चर्च से, कोई वास्ता नहीं है।

धर्म का संबंध है, मनुष्य के मन से। अगर कोई मंदिर है, तो मनुष्य का मन है। और अगर कहीं कोई सत्य और परमात्मा है तो वहीं खोजा जाना है। जो किन्हीं और मंदिरों में खोजते हैं वे भटक जाते हैं। क्योंकि वे सब मंदिर बाहर होंगे और बाहर के मंदिर और बाहर के मकानों में कोई फर्क नहीं। भीतर है कोई, और वह भीतर जो मंदिर है, उसकी खोज उसी दिन शुरू होती है जिस दिन यह भ्रम टूट जाता है कि इस मन को भरने की दौड़ व्यर्थ है, यह दिखाई पड़ जाता है। जब तक हम इस मन को भरने की दौड़ में होते हैं तब तक न समय होता है और न फुरसत होती है। कि हम उसे खोजें जो भीतर है क्योंकि मन की इस

दौड़ को भरने कि लिए हमें बाहर दौड़ना पड़ता है। भीतर जाने का अवकाश नहीं मिलता, समय नहीं मिलता, सुविधा नहीं मिलती।

मन को भरना है तो बाहर दौड़ना पड़ता है और परमात्मा को जानना है तो भीतर। जो बाहर दौड़ रहा है वह भीतर नहीं देख पाए इसमें कोई आश्चर्य नहीं। हम सब बाहर दौड़ रहें हैं। और हम सबका आज तक का भी अनुभव वही है, जो उस राजमहल के उस राजा को हुआ था।

हममें से कौन कितना भर गया है? और क्या यह सीधा सा तर्क और सीधा सा अनुमान नहीं कि आज तक हम दौड़े हैं और भरे नहीं तो कल भी हम दौड़ेंगे तो भर कैसे जाएंगे? आज तक हम सब दौड़े हैं और खाली हैं। लेकिन कल की आशा दौड़ौ चली जाती है कि कल भर जाएं शायद। और दौड़ें, और दौड़ें, कल शायद वह फूलफिलमेंट मिल जाए, वह पूर्णता मिल जाए जिसकी तलाश और खोज है। लेकिन जो दौड़ता है बाहर, वह उसे कभी न पा सकेगा। शायद मनुष्य के निर्माण के समय ही कोई बात हो गई जिसकी वजह से यह नहीं हो सकता।

मैंने एक बड़ी काल्पनिक कथा सुनी है। मैंने सुना है कि परमात्मा ने आदमी को बनाया और यह आपको पता है, आदमी को बनाने के बाद उसने फिर कुछ भी नहीं बनाया। आदमी को बना के वह घबड़ा गया होगा और उसने बनाने का अपना सारा काम बंद कर दिया होगा। और आदमी से शायद वह डर गया होगा उसकी आशा न थी कि ऐसा आदमी बन जाएगा और शायद, पुरानी कथा है, वह इतना डर गया अपने ही बनौ गए आदमी से कि उसने देवताओं से पूछा कि आज नहीं कल यह आदमी मुझे परेशान करने लगेगा। मुझे कोई छिपने की जगह बता दो जहां मैं छिप जाऊं और यह आदमी मुझे न खोज सके।

तो अलग-अलग सुझाव औ, बड़े प्रस्ताव औ, किसी ने कहा दूर हिमालय में, पहाड़ों में छिप जाओ। परमात्मा हंसा और उसने कहा कि जो आदमी है हिमालय इसके लिए बहुत दूर नहीं है। यह वहां पहुंच जाएगा। किसी ने कहा चांद तारों में छिप जाओ परमात्मा ने कहा थोड़ी बहुत देर छिपे रह सकते हैं। लेकिन यह आदमी जैसा मैंने बना लिया है, यह वहां पहुंच ही जाएगा। फिर किसी ने उससे कहा फिर एक ही रास्ता है, इसी आदमी के भीतर छिप जाओ। परमात्मा राजी हो गया। यह सुझाव बड़ा उचित और बड़ी समझदारी का था। क्योंकि आदमी और सब जगह ढूंढेगा शायद ही उसे ख्याल आए कि उसके भीतर भी कुछ ढूंढने को कुछ है।

कहानी तो काल्पनिक है लेकिन बात बड़ी सच है। आदमी ढूंढता है बाहर और जिसे पाना है, वह है उसके भीतर इसलिए जितनी खोज बढ़ती है, उतना ही खोता चला जाता है। उलटा ही होता है। खोज होती है ज्यादा और पाता है कि खो गया हूं।

अज्ञात की ओर

सिकंदर हिंदुस्तान की तरफ आता था। रास्ते में उसे एक फकीर मिला डायोजनीज, बड़ी खबर थी उस फकीर की, बड़ा अनूठा वह आदमी था। एक छोर पर सिकंदर था तो दूसरे छोर पर वह था। सिकंदर ने राह से चलते वक्त सोचा कि मिलता चलूं डायोजनीज को भी। बड़ी खबर सुनी है इस आदमी की नंग-धड़ंग, नंगा ही वह रहता था। एक छोटे से टीन के पोंगरे में पड़ा रहता था। टीन का एक गोल पोंगरा था, उसे धक्के दे कर किसी भी दूसरे गांव में ले जाना आसान था। वह उसमें ही सोता और उसमें ही रहता, वह दोनों तरफ से खुला था। कोई द्वार दरवाजे न थे।

सिकंदर ने खबर भेजी खबर पहुंचाई की जा कर कह दो कि महान सिकंदर मिलने आता है। डायोजनीज अपने उस पोंगरे के बाहर सुबह की धूप लेता था सर्दी के दिन थे। वह हंसने लगा और उसने कहा जाओ कह देना सिकंदर को जो खुद को महान समझता है उससे छोटा दूसरा आदमी नहीं है। वे सिपाही बोले बड़ी भूल की बात कह रहे हो। इसका एक ही नतीजा हो सकता है कि गर्दन तुम्हारे सिर से अलग कर दी जौ।

डायोजनीज ने कहा कि जाओ और कह देना बड़ी कठिन है यह बात क्योंकि जिस गर्दन को मेरी कोई अलग कर सकता है उसे बहुत देर पहले ही मैं खुद ही अलग की चुका हूं। कह दो सिकंदर से बहुत मुश्किल है यह बात तलवार काम नहीं कर सकेगी। क्योंकि जिस शरीर को वह समाप्त करेगा मैं जान चूका हूं कि वह मैं नहीं। खबर यह सिकंदर को कर दी गई होगी।

सिकंदर आया और उसने डायोजनीज से कहा बहुत खुश हूं तुम्हारी बातों से तुम्हारी हिम्मत और साहस से। तुम अकेले आदमी हो जिसने सिकंदर को जबाब दिया है। मैं खुश हूं। डायोजनीज ने कहा लेकिन मैं बहुत दुखी हूं। तुम्हें देख कर मेरे मन में बड़ी दया आती है बहुत दुख होता है। तुम पागल हो। सिकंदर ने पूछा क्या है मेरा पागलपन डायोजनीज ने कहा महीनों से देखता हूं फौजें चली जा रहीं हैं। क्या इरादे हैं? क्या करना चाहते हो? इतने हथियार इतने घेड़े, इतने सैनिक यह क्या हो रहा है? कहां जा रहे हो? ये तोपें कहां जा रही हैं? सिकंदर ने कहा कि मेरा इरादा है एशिया माइनर को जितने का। डायोजनीज ने पूछा और उसके बाद? सिकंदर ने कहा कि उसके बाद हिंदुस्तान और डायोजनीज ने पूछा उसके बाद सिकंदर ने कहा पूरी दुनिया और डायोजनीज ने पूछा उसके बाद सिकंदर ने कहा फिर मैं विश्राम करूंगा। आनंद से विश्राम करूंगा।

डायोजनीज बोला बड़े पागल हो इसलिए मैंने कहा मैं अभी विश्राम कर रहा हूं आ जाओ और विश्राम करो इतनी दौड़ की क्या जरूरत है? अगर अंत में विश्राम ही करना है तो इतनी दौड़ की क्या जरूरत है? और अगर अंत में अपने पर ही लौटना है तो इतनी सारी दुनिया के भ्रमण करने की क्या जरूरत है? कहते हो आखिर में अपने पर लौट आऊंगा। अपने घर और विश्राम करूंगा। तो इतनी दौड़ नाहक समय खो रहे हो। इतनी देर और

विश्राम कर ले सकते हो और फिर मेरे झोपड़े में दो के लायक काफी जगह है आ जाओ, जैसा मैं विश्राम कर रहा हूं तुम भी करो।

सिकंदर ने कहा कि बात तो तुम्हारी ठीक मालूम पड़ती है लेकिन मैं अब आधी यात्रा पर निकल आया। अब बीच से लौटना उचित नहीं। डायोजनीज बोला तुम्हें पता है आज तक किसी आदमी की यात्रा पूरी नहीं हुई। हर आदमी को बीच यात्रा से लौट जाना पड़ता है। और तुम भी बीच यात्रा से लौट जाओगे स्मरण रखना। वह क्षण नहीं आएगा जब तुम विश्राम कर सको क्योंकि वह चित्त तुम्हारा नहीं है जो विश्राम और आनंद को जान ले और तुम बीच में ही टूट जाओगे समाप्त हो जाओगे। यात्रा तो नहीं होगी पूरी तुम पूरे हो जाओगे। और यही हुआ सिकंदर भारत से वापस लौटते वक्त घर तक नहीं पहुंच पाया। बीच में समाप्त हो गया।

फिर तो बड़ी अजीब एक और घटना घटी और वह ये कि जिस दिन सिकंदर की मृत्यु हुई संयोग की बात उसी दिन डायोजनीज की भी मृत्यु हुई। और सारे यूनान में एक कहानी प्रचलित हो गई की मरने के बाद दोनों वैतरणी पर मिल गए स्वर्ग में। जब वे वैतरणी पार करते थे, नदी पार करते थे, स्वर्ग के प्रवेश के लिए तो वहां उनका मिलना हो गया वे एक ही दिन मरे थे। सिकंदर थोड़ी देर पहले मरा था और डायोजनीज थोड़ी देर बाद। सिकंदर आगे था डायोजनीज पीछे था। पैरों की आवाज सुन कर और किसी की हंसने की आवाज सुन कर सिकंदर को ख्याल आया यह हंसी तो पहचानी हुई मालूम पड़ती है। लौट कर उसने देखा हैरान हुआ वही फकीर था। और तब सिकंदर बहुत डर आया। उसकी कल्पना न थी कि इस आदमी से फिर मिलना हो जाएगा। उसकी घोषणा सच साबित हुई थी यात्रा अधूरी समाप्त हो गई थी और सिकंदर ने दुनिया तो जीत ली थी लेकिन विश्राम नहीं कर पाया था।

शायद डायोजनीज इसीलिए हंस रहा था। लेकिन अपनी झेंप और अपनी हीनता मिटना को सिकंदर ने जोर से खुद भी हंसा और चिल्ला कर कहा कि बड़ी खुशी की बात है डायोजनीज हम दोनों का फिर मिलना हो गया। एक बादशाह का एक फकीर से फिर से मिलना हो गया। डायोजनीज और जोर से हंसने लगा और उसने कहा कि तुम ठीक ही कहते हो एक बादशाह का एक फकीर से मिलना। लेकिन थोड़ी भूल करते हो कि कौन बादशाह है और कौन फकीर है?

बादशाह पीछे है और फकीर आगे। मैं सब कुछ पा कर लौट रहा हूं और तुम सब कुछ खो कर लौट रहे हो फिर कौन है बादशाह इस समय?

एक ऐसी संपदा है मनुष्य के भीतर कि उसे पाए बिना न कभी कोई पूर्ति, पूर्णता, न कोई आनंद को उपलब्ध होता है। एक ऐसा सत्य है मनुष्य के भीतर, एक ऐसा राज्य, एक ऐसा साम्राज्य, एक ऐसा सौंदर्य, एक ऐसा आनंद और आलोक कि उसे पाए बिना हर

आदमी दरिद्र है, दीन हीन है। दुखी और पीड़ित है। फिर चाहे वह बाहर की दुनिया में कुछ भी पा ले अगर भीतर के जगत में उसने कुछ नहीं पाया तो उसकी सारी संपदा का मूल्य दो कौड़ी से ज्यादा नहीं। और वह संपत्ति केवल प्रतीत होती है कि है। क्योंकि जो संपत्ति छिन सकती है वह संपत्ति नहीं है केवल विपत्ति है। और जो संपत्ति नहीं छिनी जा सकती वही संपत्ति है।

क्या कोई ऐसी संपत्ति है मनुष्य के भीतर? क्या कोई ऐसा सत्य है? क्या कोई ऐसा लोक है मनुष्य की चेतना में? जहां वह दुख और पीड़ा के पार हो जाए। अंधकार और अज्ञान के बाहर, जान सके मृत्यु के अतीत, जान सके उसे जो अनंत है और असीम है। है, मनुष्य के भीतर है, सबके भीतर है लेकिन होना काफी नहीं है उस पर आंख पड़नी चाहिए। उसका दर्शन होना चाहिए। अगर मेरे घर में खजाने भी गड़े हों और मुझे पता न हो तो मैं भिखारी की तरह भटकूंगा, रोऊंगा, गिड़गिड़ाऊंगा, दूसरों के द्वारों पर भीख मांगूंगा मेरे घर में गड़े हुए खजाने किसी अर्थ के न होंगे। वे अर्थवान हो सकते हैं तभी जब मैं उन्हें जान लूं, पहचान लूं।

एक बहुत बड़े महानगर में एक भिक्षु मर गया था। वह जिस जमीन पर तीस वर्षों से भीख मांगता रहा बैठ कर, जहां उसने अपने गंदे चीथड़े फैला रखे थे। और तीस वर्षों की गंदगी फैला रखी थी। वह मर गया तो पड़ोस के लोगो ने लाश को तो फिंकवा दिया और चूंकि उस भिखारी ने तीस वर्षों तक गंदगी की थी उस जमीन पर, उन्होंने सोचा इसे खोद कर जरा इसकी जमीन साफ करवा दें। वे हैरान रह गए जहां उन्होंने खोदा वहां खजाने गड़े थे। और वह भिखारी उन्हीं के ऊपर बैठ कर जीवन भर भिक्षा का पात्र फैलाए बैठा रहा और भीख मांगता रहा।

क्या अर्थ था उस खजाने का जो नीचे गड़ा था? कोई भी नहीं, वह न होने के बराबर था। वह भिखारी और हम में बहुत भेद नहीं। जिस जमीन पर हम खड़े हैं वहीं बहुत कुछ गड़ा है। जहां हम हैं वहां बहुत कुछ है। ऐसे खजाने हैं जिन्हें पा कर आदमी परम आनंद को उपलब्ध हो जाता है। ऐसा सौंदर्य है, ऐसा सत्य है, ऐसा संगीत है कि जिसमें डूब कर जीवन का अर्थ उपलब्ध हो जाता है। लेकिन उस तरफ आंख उठनी चाहिए। उसके होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। वह दिखाई पड़ना चाहिए। अगर वह दिखाई नहीं पड़ता तो हम तो भिखमंगे भीख मांगे चले जाएंगे। और हम भीख मांगते ही समाप्त भी हो सकते हैं।

लेकिन उस तरफ आंख तभी उठ सकती है जब बाहर की तरफ से आंख का धोखा टूट जाए। उसके पहले उसकी तरफ आंख नहीं उठ सकती। कौन सी चीज है जो रोके हुए है, उस तरफ आंख उठने से? कौन सी बात है जो अटकाए हुए है? एक बात और केवल एक ही बात और वह यह कि शायद यह आशा कि बाहर में कुछ पा लूं, संपत्ति, शक्ति, पद, वैभाव, कुछ पा लूं बाहर तो तृप्ति हो जाएगी मेरी।

यह आशा और यह भ्रम, भीतर आंख नहीं उठने देती। चौबीस घंटे, चौबीस घंटे आंख अटकी रहती है, कहीं बाहर। फिर यह आंख बाहर भटकते-भटकते, परेशान हो जाती है, थक जाती है, बुढ़ापा आ जाता है तो हम देखते हैं बूढ़े आदमियों को मंदिरों में जाते, संन्यासियों की बातें सुनते शास्त्र पढ़ते। थक जाती है आंख, बाहर से ऊब जाती है, परेशान हो जाती है तो फिर हम सोचते हैं अब धर्म की शरण क्योंकि मौत आती है करीब और वह जीवन तो हमने गंवा दिया।

लेकिन तब भी हम बाहर ही खोजते हैं। जीवन भर की गलत आदत पीछा नहीं छोड़ती। तब भी हम किसी मंदिर में खोजते हैं जो बाहर है। और किसी गुरु की चरणों में खोजते हैं वह भी बाहर है। और किसी शास्त्र में खोजते हैं वह भी बाहर है। और हिमालय पर चलें जाएं और संन्यासी हो जाएं वह सब होना बाहर है।

वह जीवन भर की जो गलत आदत थी बाहर खोजने की यद्दपी यह दिखाई पड़ गया कि बाहर नहीं मिलता लेकिन फिर भी धर्म के नाम पर भी बाहर ही खोजते हैं। पहला भ्रम टूट जाता है तो दूसरा भ्रम उसकी जगह खड़ा हो जाता है।

सवाल यह नहीं है कि बाहर आप धन खोजते हैं अगर आप धर्म भी बाहर खोजते हैं तो बात वही है कोई फर्क न हुआ सवाल यह नहीं है कि बाहर आप शक्ति खोजते हैं। पद खोजते हैं, राज्य खोजते हैं। अगर ईश्वर को भी बाहर खोजते हैं कोई फर्क न हुआ, बात वहीं की वहीं है। जो बाहर खोजता है उसकी आंख भीतर नहीं पहुंच पाती। फिर चाहे बाहर वह कुछ भी खोजता हो।

एक संन्यासी मोक्ष खोज रहा है कि मरने के बाद मोक्ष चला जाएगा। बाहर खोज रहा है। एक आदमी परमात्मा को खोज रहा है जगह जगह जगह जगह बाहर खोज रहा है।

बाहर की खोज संसार है फिर चाहे वह खोज किसी भी चीज की क्यों न हो? भीतर की खोज धर्म है। भीतर क्या खोजेंगे? भीतर का तो हमें कोई पता ही नहीं खोजेंगे क्या। ईश्वर को खोजेंगे धन को खोजेंगे क्या खोजेंगे भीतर? भीतर तो अननोन है, अज्ञात है, क्या खोजेंगे? भीतर का हमें कोई पता नहीं इसलिए हम क्या खोजेंगे?

बस एक ही बात हो सकती है बाहर की खोज व्यर्थ दिखाई पड़ जाए तो बाहर से आंख अपने आप भीतर लौटनी शुरू हो जाएगी। जहां हमें सार्थकता दिखाई पड़ती है वहां हमारी आंख अटकी रहती है। वहीं हमारी आंख लगी रहती है जहां हमें अर्थ दिखाई पड़ता है, मीनिंग दिखाई पड़ता है। अगर वह मीनिंग दिखाई पड़ना बंद हो जाए कि वहां नहीं है अर्थ, आंख बदल जाएगी, फौरन बदल जाएगी। जहां हमें दिखाई पड़ता है कि अर्थ है वहीं हम बंधे रह जाते हैं।

एक रात एक जंगल में दो साधु निकलते थे। वृद्ध साधु जैसे ही सांझ ढलने लगी और सूरज ढलने लगा। अपने युवा साथी से पूछा कोई खतरा तो नहीं है इस जंगल में कोई

डर तो नहीं है। वह युवा संन्यासी हैरान हुआ आज तक ऐसी बात उसके वृद्ध गुरु ने कभी न पूछी थी। अंधेरे से अंधेरे, बीहड़ से बीहड़, निविड़ से निविड़, जंगलों में से वे निकले थे। लेकिन कभी उसने न पूछा था कि कोई भय तो नहीं, कोई फियर तो नहीं, कोई डर तो नहीं। संन्यासी को डर कैसा? वह थोड़ा चिंतित हुआ आज यह बात क्यों उठाई है मन में? क्या हो गया है? आज कुछ गड़बड़ जरूर है। आज कोई बात जरूर है।

थोड़ी देर बाद वे एक कुएं के पास रुके हाथ मुंह धो लेने को। सूरज ढल गया था। वृद्ध ने अपनी झोली युवा को दी और कहा जरा संभाल कर रखना मैं हाथ मुंह धो लूं। तब उस युवक को ख्याल आया झोली में जरूर कुछ होना चाहिए। शायद कुछ है झोली में उसी का भय है। उसने झोली में हाथ डाला देखा एक सोने की ईंट है। उसने उस ईंट को तो फेंक दिया जंगल के रास्ते के किनारे। उतने ही वजन का एक पत्थर झोली के भीतर रख दिया।

फिर यात्रा फिर शुरू हो गई। गुरु आ गया और उसने जल्दी से अपनी झोली ले ली और वे फिर चलने लगे। थोड़ी ही देर बाद फिर गुरु ने कहा जंगल में कोई डर तो नहीं है रात घनी होती जाती है। रास्ता तुम्हारा परिचित है भटक तो न जाएंगे। जल्दी ही गांव आ जाएगा या नहीं? जल्दी ही गांव आ जाएगा या नहीं? उस युवक ने कहा भयभीत न हों अब अब कोई भय नहीं मैं भय को पीछे फेंक आया हूं। उसने घबड़ा के झोली में हाथ डाला वहां तो एक पत्थर का टुकड़ा रखा था। वह वृद्ध हंसने लगा और उसने कहा कितने आश्चर्य की बात है। मुझे ख्याल था कि सोने की ईंट ही रखी है तो मैं संभाले चला जा रहा था। बार-बार टटोल के देख लेता था। मुझे क्या पता है कि भीतर पत्थर है?

पत्थर उसने फेंक दिया और वह बोला कि अब चलने की कोई जरूरत नहीं है अब यहीं सो जाएं। अब गांव फिर सुबह उठ कर चलेंगे। उस ईंट में अर्थ था तो मन वहां बंधा था। अब ईंट, पत्थर हो गई तो रात वहीं सो गए वे। फिर कोई भय न था फिर कोई चिंता न थी। फिर कोई विचार न था। फिर वह झोला एक तरफ पड़ा रहा और वह पत्थर भी एक तरफ पड़ा रहा।

जहां हमारा अर्थ है, चाहे उसमें अर्थ हो या न हो। जहां हमें अर्थ का बोध है,जहां हमारे चित्त को लगता है कि वहां अर्थ है, वहां हम बंधे रह जाते हैं। बाहर बाहर जो जगत है उसमें लगता है अर्थ है इसलिए बंधन है।

बाहर का जगत नहीं बांधता है किसी को वह घर नहीं बांधता जिसमें आप रहते हैं वे पत्नी और बच्चे नहीं बांधते जो आपके पास हैं। कोई नहीं बांधता आपको। आप के अर्थ का बोध बांधता है। आपको लगता है कि वहां अर्थ है तो चित्त बंध जाता है, अटक जाता है, उलझ जाता है।

फिर कुछ नासमझ हैं कि इस बाहर के जगत को छोड़ के भागते हैं पत्नी को छोड़ के बच्चे को छोड़ के घर द्वार छोड़ के जंगल की तरफ भागते हैं। जो भागता है वह भी मानता है कि अर्थ वहां था। नहीं तो भागने का कोई कारण नहीं।

जिसके पीछे हम भागते हैं उसमें भी अर्थ है और जिससे हम भागते हैं उसमें भी अर्थ है। अगर अर्थ न हो तो उससे भागने का कोई कारण भी तो नहीं। दो तरह के लोग हैं जमीन पर एक तो वे जो बाहर की चीजों की पीछे भागते हैं और एक वे जो बाहर के चीजों से डर के भागते हैं। लेकिन दोनों एक बात में सहमत हैं कि बाहर की चीज में अर्थ है।

ये दोनों ही व्यक्ति धार्मिक नहीं। ये गृहस्थ धार्मिक नहीं जो घर में रह रहा है और वह संन्यासी धार्मिक नहीं जो घर छोड़ कर भागता है। इन दोनों का जहां तक इस बात का संबंध है कि बाहर अर्थ है ये दोनों सहमत और राजी हैं। यह एक ही आदमी की दो शक्लें हैं। यह एक ही आदमी के दो पहलू हैं। यह एक ही दृष्टि के दो रूप हैं। यह भिन्न दृष्टि नहीं है।

भिन्न दृष्टि तो उसकी है जिसे बाहर अर्थ दिखाई पड़ना बंद हो जाता है। तो न तो वह बाहर की चीजों के पीछे भागता है और न उनसे डर के भागता है। उसका भागना, उसका दौड़ना बंद हो जाता है। न तो वह धन के पीछे भागता है और न धन को छोड़ कर भागता है।

एक बहुत बड़े संन्यासी के पास मैं था। लागों ने कहा उनके सामने अगर कोई रुपये पैसे ले जाए तो वह आंख बंद कर लेते हैं। तो मैंने कहा कि फिर रुपये पैसे से उनका लगाव जारी है। उनका संबंध कायम है। रुपये पैसों पर उनकी नजर है। नहीं तो आंख बंद करने का क्या कारण है? कौन सी वजह है।

अगर कोई आदमी स्त्री को देख कर आंख बंद कर लेता हो तो समझ लें उसकी आंख स्त्री पर है। नहीं तो आंख बंद करने की क्या वजह है? भागने की क्या वजह है? डरने की क्या वजह है? कोई स्त्री से थोड़े ही डरता है? कोई स्त्री पुरुष से थोड़े ही डरती है। डरती है अपने भीतर छिपे हुए भाव से। डरता है व्यक्ति अपने भीतर छिपी हुई कामना से। वह वहां मौजूद है इसलिए डर है इसलिए आंख बंद करते हैं। और आंख बंद करने से वह मिटेगा जो आंख के भीतर है। आंख बंद करने से उसका क्या संबंध है? कोई भी संबंध नहीं है। आंख खुली हो या बंद हो जो भीतर है वह भीतर है।

तो हम धन के पीछे भागे कि धन छोड़ के भागे। हम राज्य को पकड़े या राज्य को छोड़े। दोनों हालत में वहीं हैं। कोई फर्क नहीं है। संन्यास के भ्रम में, इस बात के भ्रम में कि जो बाहर को छोड़ कर भागता है वह धार्मिक है। जमीन पर धर्म को नहीं आने दिया। यह बात बिलकुल ही भ्रामक है। यह वही आदमी है जो चीजों के पीछे भाग रहा था। यह

वही आदमी है बिलकुल वही जो चीजों को छोड़ कर भाग रहा है। इसके भीतर कोई भी क्रांति नहीं हो गई।

एक गांव में एक वृद्ध दंपति था। पति था और पत्नी थी। और दोनों न तो भीख मांगते और न ही कोई बड़ा व्यवसाय करते थे। लकड़ियां काट लाते थे जंगल से। बेच देते, जो पैसा आ जाता संध्या तक, जो थोड़ा रूखा सूखा खाने को मिल जाता खा लेते और जो बच जाता वह संध्या बांट देते। रात्रि फिर दरिद्र हो कर सो जाते। सुबह फिर वही लकड़ी काट लाते।

एक दिन वर्षा थी, दूसरे दिन भी वर्षा और तीसरे दिन भी। अचानक वर्षा आ गई थी। तीन चार दिन उन्हें भूखे ही रह जाना पड़ा और चौथे दिन जब सूरज निकला और धूप निकली तो वे जंगल गए।

चार दिन के भूखे बूढ़े कमजोर बामुश्किल उन्होंने लकड़ियां काटी और उन लकड़ियों को काट कर उनकी मौलियां बना कर लौटे। पति आगे था पत्नी थोड़े पीछे थी। रास्ते पर देखा उसने कि एक थैली पड़ी है। कुछ अशर्फियां बाहर पड़ी हैं सोने की कुछ थैली के भीतर हैं। उसके मन को ख्याल आया पति को ख्याल आया मैंने तो स्वर्ण को जीत लिया मैंने तो धन पर विजय पा ली। मैंने तो त्याग कर दिया है पूरा लेकिन पत्नी का क्या भरोसा?

पतियों को कभी भी पत्नियों पर कोई भरोसा नहीं है उसको भी नहीं था। सोचा कहीं उसका मन न डोल जाए, कहीं उसके मन में यह ख्याल न आ जाए, चार दिन की भूख परेशानी, उठा ले, व्यर्थ पाप लगेगा उसके मन को। कमजोर होतीं हैं स्त्रियां सोचा ऐसा उसने। ऐसा अपने आपको मजबूत सोचने के लिए सुविधा होती है दूसरे को कमजोर सोच लेना।

तो उसने जल्दी से उस अशर्फी और थैली को गड्ढे में सरका कर मिट्टी डाल दी। पीछे उसकी पत्नी भी आ गई जब वह मिट्टी डाल ही रहा था। उसकी पत्नी ने पूछा क्या करते हैं? सत्य बोलने का नियम था उसका मुश्किल में पड़ गया।

जो भी नियम ले लेते हैं सत्य बोलने का वे मुश्किल में पड़ ही जाते हैं। क्योंकि सत्य सहज निकले वह बात दूसरी है और नियम से निकले वह बात बिलकुल दूसरी है। तो कठिनाई खड़ी हो गई। सच बोलता है तो जो बात छिपानी चाही थी वह जाहिर होती, झूठ बोल नहीं सकता इसलिए मजबूरी में उसे कहना ही पड़ा कि मुझे क्षमा करो, अपने मन में कोई वासना मत लाना। बहुत बहुमूल्य अशर्फियों वाली थैली यहां पड़ी थी। सोने की अशर्फियां थीं। मैंने सोचा मैंने तो स्वर्ण पर विजय पा ली लेकिन तुम्हारा मन कहीं डोल न जाए। इसलिए मैंने उन्हें हटा कर मिट्टी से ढंक दिया ताकि तुम देख न पाओ। वह पत्नी हंसने लगी और उसने कहा तुम्हें सोना अभी दिखाई पड़ता है। और तुम्हें मिट्टी पर मिट्टी डालते हुए शर्म भी नहीं आती!

यह जो पति है यह वही का वही है इसने सोना छोड़ा है लेकिन सोने से इसका अर्थ नहीं गया। इसे अभी सोना मिट्टी नहीं हुआ। सोना ही है छोड़ा है इसने लेकिन छोड़ने से सोना मिट्टी थोड़े ही जाता है। जानने से, छोड़ने से नहीं, जागने से, छोड़ने से नहीं, बोध के जगने से सोना जरूर मिट्टी हो जाता है। और सोना मिट्टी हो जाए तो न तो उसे पकड़ने की दौड़ रह जाती है और न छोड़ने की। सोना अपनी जगह रह जाता है, हम अपनी जगह रह जाते हैं। उससे हमारा नाता टूट जाता है।

गृहस्थी का भी नाता है संन्यासी का भी नाता है रिलेशनशिप है वह चाहे पकड़ने की हो चाहे छो्ड़ने की हो। धार्मिक आदमी वह है बाहर के जगत से जिसका अर्थ विलीन हो गया। रिलेशनशिप टूट गई। संबंध टूट गया। यह तो बोध, अवेयरनेस, बाहर से हम इतना अपने को भरते हैं फिर भी भर नहीं पाते तो कहीं कोई भूल तो नहीं है? कहीं कुछ ऐसा तो नहीं है कि बाहर हम कुछ भी इकट्ठा करने में समर्थ हो जाएं भीतर हम खाली ही बने रहेंगे।

सच है, सीधी गणित की बात है जो बाहर है वह भीतर को कैसे भर सकेगा? जो बाहर है वह भीतर आ कैसे सकेगा। खालीपन है भीतर, एम्पटीनेस है भीतर और जो भी हम जोड़ लेंगे वह होगा बाहर। भीतर और बाहर का मेल कहां होता है? जोड़ेंगे जो वह रह जाएगा बाहर भीतर उसे कैसे ले जाइएगा?

जो भी बाहर है वह भीतर न जा सकेगा। वह डायमेंशन अलग है वह आयाम अलग है। जो बाहर है वह भीतर नहीं जा सकेगा। बाहर का बाहर रह जाएगा। भीतर हम खाली के खाली रह जाएंगे। और उसी भीतर के खालीपन को भरने के लिए दौड़े थे। इकट्ठा किया था यह सब। इस इकट्ठा करने में जीवन तो व्यतीत होगा लेकिन उपलब्धि नहीं होती है, नहीं हो सकती है।

भीतर को भरने का उपाय बाहर नहीं है। इस बोध का नाम धर्म है। इस समझ इस अंडरस्टैंडिंग का नाम धर्म है। न तो गीता पढ़ लेने का नाम और न बाइबिल पढ़ लेने का नाम और न टीका लगा लेने का नाम और न मंदिर चले जाने का नाम और न इस तरह के वस्त्र या उस तरह के वस्त्र पहन लेने का नाम धर्म है। यह सब धोखे की बातें हैं जिनमें हम धार्मिक होने का मजा ले लेते हैं बिना धार्मिक हुए।

सस्ते उपाय हमने खोज लिए हैं धार्मिक होने के भी। सस्ते दो दो पैसे के उपाय। एक आदमी चार पैसे की माला खरीद लाए और उस पर उंगलियां फिराता रहे तो वह धार्मिक हो जाता है। इस भांति सेल्फ डिसेप्शन खुद को हम धोखा दे लेते हैं हक धार्मिक हो गए हैं। धार्मिक होना एक आमूल क्रांति है और वह क्रांति इस बात से संबंधित है कि बाहर के जीवन में अर्थ नहीं है यह दिखाई पड़ जाए। यह कैसे दिखाई पड़ेगा?

अज्ञात की ओर

किस मार्ग से यह दिखाई पड़ जाएगा कि बाहर के जीवन में अर्थ नहीं है। आबजरवेशन से, निरीक्षण से। बाहर के जीवन को और स्वयं को थोड़ा निरीक्षण करें थोड़ा देखें। निंदा न करें। निंदा न करें कि बाहर का जीवन पाप है और बुरा है, छोड़ना है इसे। जो निंदा करता है उसे अर्थ दिखाई पड़ रहा है। निंदा न करें। कंडेमनेशन का कोई मतलब नहीं है।

बाहर की दुनिया की, दुनिया की निंदा न करें कि यह पाप है और बुरा है। पाप और बुरा है तो भी अर्थ मौजूद है। नहीं बाहर के जीवन को बहुत निर्दोष चित्त से देखें। बहुत इनोसेंट आबजरवेशन चाहिए। देखें आंख खोल कर यह बाहर की जिंदगी है, क्या है यह? और इतना मैं दौड़ूं और इतना इकट्ठा कर लूं, क्या होगा? क्या हो रहा है दूसरों को?

अमेरिका में एक अरबपति कारनेगी मरा। तो उसके पास चार अरब रुपये थे मरते वक्त लेकिन बहुत उदास और दुखी था। उसकी जीवन कथा लिखने वाले लेखक ने उससे पूछा आप तो तृप्त होंगे अपने ही जीवन में अकेले अपने श्रम से चार अरब रुपये आपने खड़े किए। कारनेगी ने कहा तृप्त? मेरे इरादे दस अरब रुपये इकट्ठे करने के थे। मैं एक असफल आदमी हूं।

क्या आप सोचते हैं कारनेगी को दस अरब रुपये मिल जाते तो सफल आदमी हो जाता। हम जानते हैं जिनको दस अरब मिलते हैं वे भी सफल नहीं मानते अपने को क्योंकि यदि वे सफल मान लें तो आगे की दौड़ बंद कर दें। लेकिन नहीं दस अरब के बाद भी दौड़ जारी रहती है। सफलता नहीं आई, नहीं तो दौड़ बंद हो जाती। सफलता आती तो दौड़ रुक जाती। कभी किसी की दौड़ रुकते देखी है। दस अरब मिल जाते कारनेगी को उसे पता भी नहीं चलता कि उसके सपने सौ अरब के कब हो गए? चुपचाप अंधेरे में सपने आगे बढ़ जाते हैं।

जितना हम पा लेते हैं उससे बहुत आगे हमारे सपने खड़े हो जाते हैं। आकाश के क्षितिज की भांति होरिजन की भांति दिखता है कि जमीन को छू रहा है। यही पास, यही सूरत के बाहर जमीन को छू रहा है आकाश चारों तरफ से, बढ़ें, बढ़ें थोड़ा, तो पाएंगे वह आकाश भी हटता चला जा रहा है। सूरत बहुत पीछे छूट जाएगा और आकाश को जमीन छूने की जो रेखा है, वह उतनी ही दूर रहेगी जितनी तब थी, जब हम नहीं चले थे। कितना ही चल लें वह उतनी ही दूर रहेगी। असल में आकाश जमीन को कहीं छूता ही नहीं। नहीं तो फासला पूरा हो सकता था।

चित्त की जो क्षितिज रेखा है आकांक्षा की, आशा की, वह भी कहीं पूर्ति को छूती नहीं। नहीं तो पूरी हो सकती थी।

बच्चों की एक छोटी कथा है। अलाइस नाम की लड़की परियों के देश में पहुंच गई थी। जब वह परियों के देश में पहुंची जमीन से चलते-चलते बहुत थक गई थी। आकाश में

पहुंच गई तो बहुत थकी हुई थी। जमीन से चलना, छोटी बच्ची, भूख प्यास लग आई थी उसे। वहां जा कर उसने देखा शीतल ठंडी हवाएं बहती हैं। बड़ी सुंदर जगह है, पर भूख उसे जोर से लगी है। चारों तरफ आंखें दौड़ाई, देखा थोड़ी ही दूर पर, जरा से फासले पर, सौ कदमों की दूरी पर परियों की रानी खड़ी है। उसके हाथ में फलों के मिठाइयों के थाल हैं। और वह रानी उसे बुला रही है कि अलाइस आ, उसे इशारा कर रही है।

अलाइस ने दौड़ना शुरू किया, सुबह थी तब सूरज निकल रहा था। वह भागी, सौ ही कदम का फासला था, दो क्षण का फासला था लेकिन भागी, भागी सूरज ऊपर चढ़ने लगा और वह घबड़ा गई। वह भागती जा रही है रुक के देखती जाती है। फासला उतना ही है डिस्टेंस उतना ही है। वह रानी अब भी खड़ी है, दरख्त के नीचे, हाथ में उसके फलों के थाल है और वह इशारा करती है कि आओ, उसकी आवाज सुनाई पड़ती है कि आ जाओ अलाइस। वह फिर भागती है सूरज ऊपर आ गया। धूप कड़ी हो गई। वह थक गई पसीने से भर गई। उसने रुक कर खड़े हो कर चिल्ला कर पूछा यह क्या मामला है? सुबह से दोपहर हो गई दौड़ते-दौड़ते फासला छोटा मालूम पड़ता है लेकिन मैं दौड़ती चली जा रहीं हूं और तुम उतनी ही दूर हो जितनी दूर थीं।

उस रानी ने कहा यह मत सोचो, जो सोचते हैं वे मुश्किल में पड़ जाते हैं। दौड़ो, सोचने वाला मुश्किल में पड़ जाता है उसने कहा। दौड़ो, दौड़ने वाला पहुंचता है सोचने वाला मुश्किल में पड़ जाता है। उसको भूख लगी थी वह फिर दौड़ने लगी। सूरज ढलने को आ गया सांझ हो गई, वह अलाइस थक कर गिर पड़ी। फासला उतना का उतना था। उसने चिल्ला कर पूछा रानी यह कैसी दुनिया है तुम्हारी? सुबह से सांझ हो गई मेरे दौड़ते दौड़ते। यह रास्ता कहीं ले जाता नहीं। तुम तक पहुंचाता नहीं। फासला उतना है और अब तो अंधेरा भी उतरने लगा। उस रानी ने कहा पागल लड़की तुझे शायद पता नहीं, दुनिया में कोई रास्ता किसी को कहीं नहीं पहुंचाता।

सुबह जन्म के सूरज के साथ आदमी जहां अपने को पाता है मृत्यु की संध्या वहीं पाता है फासले उतने ही रहते हैं। फासले उतने ही रहेंगे। दौड़ने से पूरे नहीं होते। इसका आबजरवेशन चाहिए इसका निरीक्षण चाहिए कि हम आंख खोल कर चारों तरह देखें। आंख खोल कर जो देखेगा वह आदमी धार्मिक हुए बिना नहीं रह सकता। लेकिन जिनको हम धार्मिक जानते हैं वे तो आंख बंद कर के बैठ जाते हैं।

आंख बंद करने में धर्म नहीं आंख ठीक से पूरी खोलने में धर्म है। आंख बंद करना एक तरह की मौत है। आंख बंद करना एक तरह की सुसाइड है, आत्म हत्या है। क्योंकि जो आंख बंद करता है वह तथ्यों के जगत के टूट जाता है और उन्हीं तथ्यों के निरीक्षण में छिपा है सत्य। उसी में जो सब तरफ फैला है। उसी में देखना है ठीक से उसमें हम ठीक से नहीं देख पाते इसलिए अर्थ मालूम होता है। ठीक से देख पाएं अर्थ विलीन हो जाता है।

तो राइट आबजरवेशन चाहिए सम्यक दृष्टि ठीक-ठीक आंख चाहिए देखने वाली। ठीक आंख का पहला लक्षण है निष्पक्ष, अनप्रिजिड्यूस, पहला बिना किसी पक्ष के। दूसरा लक्षण है, सरलता से सहजता से जो तथ्य है उसको देखना। सिद्धांतों के माध्यम से जो तथ्य को देखता है वह तथ्यों में कभी नहीं देख पाता और जो तथ्यों को नहीं देख पाता, फैक्ट्स को नहीं देख पाता, उसकी आंखें कभी भ्रम से मुक्त नहीं हो पाती।

एक युवक अपने गुरुकुल से वापस लौटा। जब वह गुरु से विदा होता था। उसने गुरु के पैर पड़े और उसकी आंखों से आंसू गिर पड़े गुरु के चरणों पर। गुरु ने कहा रोते हो क्या बात है? उसने कहा रोऊं न तो क्या करूं? मेरे सारे मित्र आज विदाई के क्षण में कुछ न कुछ भेंट करते हैं आपको मेरे पास लेकिन सिवाय आंसुओं के और कुछ भी नहीं। तो मैं रोता हूं और एक वचन चाहता हूं कि जब मेरे पास कुछ हो तो उसे स्वीकार कर लेना। बाद में कभी जब मैं आऊं तो मुझे इंकार न हो, इसका वचन दें तो ही मैं जाऊंगा। मैं हूं बहुत दरिद्र, मां और पिता भी मेरे नहीं हैं। आपने ही मुझे शिक्षा दी और भोजन भी दिया और वस्त्र भी दिए और आश्रय भी। मेरे पास कुछ भी नहीं देने को सब कुछ आपका ही है, जो मैं हूं। तो किसी दिन अगर मैं कुछ ले आऊं तो वह स्वीकृत होगा यह वचन दे दें।

गुरु ने बहुत कहा आंसुओं से बड़ी और कोई भेंट नहीं और प्रेम से बड़ा कोई सम्मान नहीं। लेकिन फिर भी तू नहीं मानता तो तेरी मर्जी मेरे द्वार तेरे लिए हर चीज के लिए खुलें हैं, तू कभी भी आ।

वह युवक वहां से चला देश की राजधानी में पहुंचा उसी संध्या अपने एक मित्र के घर मेहमान हुआ। रात उसे करवटें बदलते देख कर उसके मित्र ने पूछा बेचैन मालूम होते हो बहुत क्या बात है? उसने कहा बेचैनी एक ही है। जिस गुरु के पास बहुत कुछ पाया उसे मैं भेंट भी न कर सका कुछ भी भेंट न कर सका उसके मित्र ने पूछा क्या भेंट करना चाहते हो? उस युवक ने कहा कि अगर पांच स्वर्ण मुद्राएं भी मुझे मिल जाएं लेकिन कहां मिलेंगी मैंने तो इकट्ठी पांच मुद्राएं देखी भी नहीं। तो मैं गुरु के चरणों में रख आता। उसके मित्र ने कहा तुम निश्चिंत सो जाओ सुबह थोड़े जल्दी उठ आना। इस देश का जो राजा है उसका नियम है कि पहले भिक्षु, पहला याचक उसके द्वार पर जो चला जाता है वह जो भी मांग लेता है वह दे देता है। तुम पांच स्वर्ण मुद्राएं मांग लेना। जल्दी चले जाना और घबड़ाने की कोई बात नहीं है, मुश्किल से कभी कोई याचक जाता होगा।

वह निश्चिंतता से सो गया और सुबह बहुत जल्दी राजा के द्वार पर पहुंच गया। कोई वहां न था। थोड़ी देर बाद राजा अपनी बगिया में घूमने को आया। तो वह हाथ जोड़ कर उसने कहा कि मैं पहला याचक हूं जो मैं मांगूंगा दे सकेंगे आप? राजा ने कहा कि आज के ही नहीं सदा के तुम पहले याचक हो क्योंकि आज तक जब से मैंने यह नियम लिया कोई नहीं आया। तो जो तुम मांगोगे मैं दे दूंगा। जो तुम मांगोगे।

जैसे ही राजा ने यह कहा जो तुम मांगोगे। पांच स्वर्ण अशर्फियों का ख्याल एकदम खिसक गया और पांच हजार अशर्फियों का ख्याल आ गया। गणित सीखा था उसने भी आप थोड़े ही गणित जानते हैं, मैं ही थोड़े ही, वह भी गणित जानता था। पांच हट गए और शून्य पर शून्य लग गए। पांच हजार, उसने सोचा जब राजा कहता है जो मांगोगे तो पागल हूं जो मैं पांच मागूं पांच हजार क्यों नहीं। और फिर उसे लगा पागल हूं जो मैं पांच हजार ही मागूं, पांच लाख क्यों नहीं? या कि पांच करोड़ या कि पांच अरब या कि खरब और फिर बहुत ही शीघ्र क्षणों में संख्याएं लंबी हो गईं। और अंतिम संख्या आ गई जो उसे मालूम थी और तब उसका हृदय धक से रह गया कि मैंने और गणित क्यों न सीख ली?

राजा सामने ही खड़ा था। उसने कहा प्रतीत होता है तुम निश्चय कर के नहीं आए तो तुम निश्चय कर लो, मैं बगिया का एक चक्कर लगा आऊं। युवक को राहत मिली, उसने कहा बड़ी कृपा है आपकी। मैं थोड़ा सोच लूं। लेकिन सोचने की तो अंतिम सीमा आ गई थी। संख्याएं चूक गईं थीं। क्या सोचे क्या करे और बहुत पीड़ा मालूम होने लगी। राजा के पदचाप सुनाई पड़ने लगे। वह वापस लौटता है। उसके पदचाप बढ़ते चले जाते हैं और वह घबड़ाया जा रहा है और मरा जा रहा है।

पांच स्वर्ण अशर्फियां बहुत पहले छूट गईं। गुरु बहुत न मालूम कहां खो गया। देने लेने की बात न रही। भेंट का कोई सवाल न था। सवाल था एक राजा कहता है जो मांगोगे दे दूंगा। तो पीड़ा मन को सताने लगी इस बात की खुशी नहीं की बहुत कुछ मिल जाएगा। इस बात का दुख कि पता नहीं कितना पीछे छूट जाएगा? मांग तो लूंगा यह लेकिन पता नहीं कितना पीछे छूट जाएगा और यह अवसर जीवन में दुबारा आए न आए और डर है कि न आएगा। क्योंकि राजा इस भेंट को दे कर सचेत हो जाएगा और शायद वापस ले ले अपने नियम को। सोचा होगा एक गरीब सा लड़का दस पचास रुपये मांगेगा। कोई स्कालरशीप की बात कहेगा या कुछ और। राजा करीब आने लगा तभी उसके सारे प्राण जैसे इकट्ठे हो गए। और उसे ख्याल आया मैं गलती में हूं संख्या छोड़ दूं। मैं सीधा मांग लूं कि जो कुछ तुम्हारे पास है सब मुझे दे दो। संख्या की उलझन गड़बड़ है। पीछे पछतावा होगा। सब दे दो जो तुम्हारे पास है। हां, दो वस्त्र छोड़ दूं। जो वह पहने है पहने चला जाए।

बाहर निकल जाओ दो वस्त्र पहने हुए। दया है मेरी कि दो वस्त्र छोड़ता हूं। ऐसे मन तो छोड़ने का नहीं होता। दो वस्त्र भी कौन छोड़ना चाहता है? राजा सामने आया तो वह निर्णित था। उसने कहा फिर से कह दें कि जो मैं मांगूंगा देंगे। राजा ने कहा- कहा मैंने। तुम चिंता क्यों करते हो? बोलो उस युवक ने कहा तब जो आप वस्त्र पहने उन्हें पहने बाहर निकल जाएं। और जो आपका है सब मेरा हुआ।

सोचा था राजा घबड़ा आएगा। पता नहीं हृदय का दौरा आ जाए हार्ट अटैक हो जाए या क्या हो जाए लेकिन राजा घबड़ाया नहीं। बात उल्टी हो गई। घबड़ाया युवक ही। क्योंकि

राजा ने आकाश की तरफ हाथ जोड़े और कहा कि हे परमात्मा जिस आदमी की मैं प्रतीक्षा करता था वह आ गया। और राजा ने कहा मेरे बेटे, दो वस्त्र छोड़ने में तुझे बहुत कष्ट होगा। वह भी मैं छोड़े जाता हूं। मैं नग्न ही इस द्वार के बाहर निकल जाता हूं। जिसमें कि कभी तुझे पछतावा न हो। और मेरे प्रति क्रोध न आए। छोड़ना बहुत कठिन होता है। राजा ने कहा दो वस्त्र भी छोड़ना बहुत कठिन होता है और तेरी उम्र में बहुत कठिन है। वस्त्र उतारने लगा राजा। युवक बोला- ठहरो। एक चक्कर और बगीचे का लगा आएं। मैं एक बार और सोच लूं। क्योंकि मैं घबड़ा आया हूं। मैं अबोध हूं मेरा कोई अनुभव नहीं है और आपकी छोड़ने की इतनी राजी, इतनी मर्जी, इतनी स्वेच्छा, इतना आनंद। तो मैं डर गया। क्योंकि जो इतना बड़ा राज्य इतनी खुशी से छोड़ कर भगवान को धन्यवाद दे कर जाता है निश्चित ही इस सब में उसने कुछ भी न पाया होगा। जब वह अपने जीवन को व्यर्थ कर लिया आपने और आप बूढ़े हो आए और आपके सारे केश शुभ्र हो गए और आपके चेहरे पर झुर्रियां आ गईं और जीवन आपसे विदा हो गया। और आप इस सबके बीच कुछ न पा सके तो क्षमा करें अभी मेरे पास जीवन है मैं वहां खोजूं जहां कुछ मिल सकता है। क्षमा करें एक दफा और घूम आएं मैं सोच लूं। राजा ने कहा सोचोगे तो मुश्किल में पड़ जाओगे। सोचने वाले हमेशा मुश्किल में पड़ जाते हैं। और फिर जीवन पड़ा है सोचते रहना मैंने भी तो जीवन भर सोचा तब जाना। रुको जल्दी क्या है? जल्दी हो तो मुझे होनी चाहिए। संभालो इसे जल्दी मैं जाऊं।

लेकिन युवक राजी नहीं हुआ और राजा को दूसरा चक्कर लगाने जाना पड़ा। और जैसा कि राजा को ज्ञात था वही हुआ। लौट कर युवक वहां नहीं था। वह अपनी पांच स्वर्ण मुद्राएं भी बेचारा छोड़ गया।

इसे मैं कहता हूं आबजरवेशन, इसे मैं कहता हूं निरीक्षण। उस युवक ने कुछ देखा, निरीक्षण किया। उसके पास आंख थी। वह राजा के आर पार देख गया। राजा की सारी संपत्ति के आर पार देख गया। उसे दिखाई पड़ गया।

एक आदमी के लिए जो व्यर्थ हो गया वह हर एक के लिए व्यर्थ है। आदमी और आदमी में भेद नहीं। मन और मन में अंतर नहीं। और एक आदमी सब आदमी की कथा है। लेकिन हम सब इस भ्रम में होते हैं कि मैं हूं एक्सेप्शन। मैं हूं अपवाद। मैं बात ही और हूं बाकी सब और होंगे। इसलिए हर आदमी यह सोच कर मैं अपवाद हूं, सोचता है निरीक्षण करने की क्या जरूरत है? मैं जीऊं अपने ढंग से। नहीं कोई मनुष्य अपवाद नहीं है।

मनुष्य की कथा एक है। मनुष्य के चित्त की कथा अलग अलग नहीं। और उसके चित्त के नियम एक हैं भिन्न नहीं। दस हजार वर्षों में अगर कोई अनुभव मनुष्य के सामने निरपवाद रूप से खड़ा हो गया है तो वह यह कि जिन्होंने बाहर खोजा उन्होंने कुछ भी नहीं पाया। एक भी बार खोजने वाला आदमी यह नहीं कह सका कि मैं हाथ उठा कर कहता हूं कि मैंने बाहर की दुनिया में पा लिया उसे जिसे मैं पाना चाहता था। पूरे मनुष्य के इतिहास

में एक आदमी नहीं जो यह कह सके कि मैंने बाहर खोजा और पा लिया और दूसरी बात भी इतनी ही निरपवाद सत्य है जिसने भीतर खोजा उनमें से भी एक भी आदमी ऐसा नहीं जिसने कहा हो मैंने भीतर खोजा और नहीं पाया।

अगर किसी चीज को साइंटीफिक ट्रूथ कहा जा सके, किसी चीज को वैज्ञानिक सत्य कहा जा सके तो वह यह है। क्योंकि इसका कोई एक्सेप्शन नहीं है कोई अपवाद नहीं है। यह यूनिवर्सल है। यह सार्वलौकिक है। यह सर्व लोक में सर्व मनुष्य के इतिहास में प्रमाणित है कि बाहर नहीं कोई अर्थ पाया जा सका।

करोड़-करोड़, अरब आदमी दौड़े और समाप्त हो गए। हम उनकी लाशों पर खड़े हैं। लेकिन हम नीचे झुक के नहीं देखते कि हमारी पैर में किनकी धूल है? किनकी लाशें हैं?

थोड़े से लोगों ने भीतर भी खोजा है और पाया है। वे थोड़े से लोग ही सुगंध की तरह प्रकाश की तरह। वे थोड़े से लोग ही उस सुवास की तरह हैं उस संगीत की तरह जो कभी कभी हमारे कानों में पड़ जाता है और कोई याद जगा देता है। खोई स्मृति और एक ख्याल और एक धुन पैदा हो जाती है। हम भी खोजें।

क्या ऐसा नहीं हो सकेगा कि कभी पूरा मनुष्य का समाज इस सत्य को खोजने में समर्थ हो जाए? क्या ऐसा कभी नहीं हो सकेगा कि मनुष्य इस पृथ्वी पर बहुत बड़ी संख्या में भीतर जो छिपा है उसे जान ले?

ऐसा हो सकेगा। क्योंकि अगर एक मनुष्य के जीवन में भी ऐसा हो सका है तो फिर मान लें समझ लें इस बात को पहचान लें इस बात को कि जो एक मनुष्य के जीवन में भी हो सका है। अगर एक बुद्ध या एक महावीर या एक कृष्ण, एक क्राइस्ट के जीवन में अगर कोई आनंद की किरण फूटी है और जीवन आलोकित हो उठा है तो हर मनुष्य हो गया हकदार उसको पाने का क्योंकि बीज अगर एक अंकुर ले आता है तो सभी बीज अंकुर ले आएंगे। अगर एक मनुष्य के भीतर ऐसी परमात्मा की सुगंध उठ आती है तो हर मनुष्य की संभावना हो गई, यह पोटेंशियलीटी हो गई। उसके भीतर भी यह संभावना प्रकट हो सकती है। हो सकता है किसी दिन जमीन पर, ऐसा दिन ऐसा लोक कि बहुत अधिक लोगों के जीवन संगीत और प्रेम और प्रकाश से भर जाएं।

धर्म के द्वारा यह होगा। धर्मों के द्वारा नहीं। रिलीजन्स के द्वारा नहीं। रिलीजन के द्वारा। धर्म के द्वारा, धर्मों के द्वारा नहीं। और यह भीड़ धर्मों की तो बाधा बनी है। यह विदा हो जानी चाहिए।

हिंदू मुसलमान ईसाई और जैन बड़ी अग्लीनेस के सबूत हैं बड़ी कुरूपताओं के मनुष्य को तोड़ने की दीवालें यहीं हैं। मनुष्य-मनुष्य के बीच के फासले यहीं हैं। और जो चीज एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से अलग कर देती हो क्या आप सोच सकते हैं वह मनुष्य को

परमात्मा से जोड़ सकेगी? जो मनुष्य को मनुष्य से ही अलग कर देती हो वह मनुष्य को परमात्मा से कैसे जोड़ सकेगी?

जो तोड़ने वाला है वह धर्म नहीं है। लेकिन जो जोड़ दे प्राणों को प्राणों से, एक को सबसे और वह जोड़ तभी पैदा होता है जब आंख भीतर जाती है। जोड़ पैदा नहीं होता बल्कि आंख भीतर जाते ही पता चलता है कि हम तो जुड़े हैं, संयुक्त हैं, इकट्ठे हैं। एक ही प्राण एक ही चेतना बहुत बहुत रूपों में प्रकट और अभिव्यक्त है। और जैसे ही आंख भीतर जाती है ज्ञात होता है कि न कोई दुख है दुख था इसलिए की हम बाहर थे बाहर होना ही दुख था। न कोई चिंता है न कोई पीड़ा और न है मृत्यु। बाहर हम थे इसलिए उसे नहीं देख पाते थे जो भीतर है और अमृत है।

इस छोटी सी चर्चा में मैंने एक ही बात आपसे कही, एक ही छोटा सा सूत्र। देखें आंख खोल कर जीवन को, निरीक्षण करें। तो बाहर की व्यर्थता दिखाई पड़ सकती है और बाहर की व्यर्थता दिखाई पड़ आए तो भीतर की सार्थकता पर तत्क्षण आंख पहुंच जाती है। और जिसकी भीतर की सार्थकता पर आंख पहुंच गई वह कोई बाहर की दुनिया को वह जानने वाला नहीं बन जाता है बल्कि वही बाहर की दुनिया के लिए भी आनंद का और सुवास का श्रोत हो जाता है। वह कोई बाहर के दुनिया को मिटाने वाला और वह जानने वाला नहीं होता। बल्कि वही आधार बन जाता है, बाहर के दुनिया के लिए भी।

क्योंकि जब भीतर सुगंध पैदा होती है तो सुगंध बाहर फैलनी शुरू हो जाती है और जब भीतर आनंद पैदा होता है तो आनंद बाहर बंटना शुरू हो जाता है और जब भीतर प्रकाश का जन्म होता है तो उसकी किरणें बाहर पहुंचनी शुरू हो जाती हैं। जो भीतर है फिर वह बाहर बंटने लगता है।

इसलिए जो स्वयं को जानता है और जो धर्म में जीता है वह संसार को उजाड़ता नहीं बल्कि उसके लिए तो सारा संसार ही परमात्मा हो जाता है।

अंत में यही प्रार्थना करूंगा, परमात्मा करे आपके भीतर से सुगंध और सत्य और संगीत पैदा हो सके। वह मौजूद है आपकी आंख वहां पहुंच जाए तो वह जाग जाएगा उठ आएगा और प्रकट हो जाएगा।

बीज मौजूद हैं अगर आपकी आंख उन बीजों पर पड़ गईं तो वे अंकुरित हो जाएंगे और उनमें फूल आ जाएंगे। और जब किसी आदमी के जीवन में फूल आते हैं तो वह पूर्णता को उपलब्ध हो जाता है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।